तिरुमल तिरुपति देवस्थान

सप्तगिरि

आध्यात्मिक सचित्र मासिक पत्रिका

SAPTHAGIRI (HINDI)
SPIRITUAL ILLUSTRATED MONTHLY
Volume:56, Issue: 03
August - 2025, Price Rs.20/-,
No. of pages-56.

अगस्त-2025
रु.20/-

श्री वरलक्ष्मी व्रत (08-08-2025)

तिरुमल श्री वेंकटेश्वरस्वामी का ब्रह्मोत्सव

दि.24-09-2025 से दि.02-10-2025 तक

दिनांक	वार	दिन	रात
24-09-2025	बुधवार	तिरुच्चि उत्सव, ध्वजारोहण	महाशेषवाहन
25-09-2025	गुरुवार	लघुशेषवाहन	हंसवाहन
26-09-2025	शुक्रवार	सिंहवाहन	मोतीवितानवाहन
27-09-2025	शनिवार	कल्पवृक्षवाहन	सर्वभूपालवाहन
28-09-2025	रविवार	पालकी में आरूढ़ मोहिनी अवतारोत्सव	गरुड़वाहन
29-09-2025	सोमवार	हनुमद्वाहन, सा.वसंतोत्सव, स्वर्णरथ	गजवाहन
30-09-2025	मंगलवार	सूर्यप्रभावाहन	चंद्रप्रभावाहन
01-10-2025	बुधवार	रथ-यात्रा	अश्ववाहन
02-10-2025	गुरुवार	चक्रस्नान	ध्वजावरोहण

आश्चर्यवत्पश्यति कश्चिदेनमाश्चर्यवद्वदति तथैव चान्यः।
आश्चर्यवच्चैनमन्यः शृणोति श्रुत्वाप्येनं वेद न चैव कश्चित्॥

(- श्रीमद्भगवद्गीता - सांख्ययोग २-२९)

कोई एक महापुरुष ही इस आत्मा को आश्चर्य की भाँति देखता है और वैसे ही दूसरा कोई महापुरुष ही इसके तत्त्व का आश्चर्य की भाँति वर्णन करता है तथा दूसरा कोई अधिकारी पुरुष ही इसे आश्चर्य की भाँति सुनता है और कोई न कोई तो सुनकर भी इसको नहीं जानता।

कोंडललो नेलकोन्न कोनेटिरायडु वाडु
कोंडलंत वरमुलु गुप्पेडुवाडु ॥कोंडललो॥

कुम्मर दासुडैन कुरुवरति नंबि
इम्मन्न वरमुलेल्ल इच्चिनवाडु
दोम्मुलु सेसिनयट्टि तोंडमान् चक्करवर्ति
रम्मन्न चोटिकि वच्चि नम्मिन वाडु ॥कोंडललो॥

अच्चपु वेडुकतो ननंतालुवारिकि
मुच्चिलि वेट्टिकि मन्नु मोसिनवाडु
मच्चिक दोलक तिरुमलनंबि तोडुत
निच्च निच्च माटलाडि नच्चिनवाडु ॥कोंडललो॥

कंचिलोन नुन्न तिरुकच्चिनंबि मीद, करु-
णिंचि, तनयेडकु रप्पिंचिन वाडु
येंच नेक्कुडैन वेंकटेशुडु मनलकु
मंचिवाडै करुण पालिंचिनवाडु ॥कोंडललो॥

श्री वेंकटेश की भक्तवशंकरता का उल्लेख किया गया है। उन-उन भक्तों के नाम लेते हैं, जो तिरुमल के इतिहास से जुडे हुए हैं। श्री वेंकटेश्वर गिरि पर विराजमान हैं। वे 'पुष्करिणी प्रिय' हैं। गिरि सम वरदानों को भी स्वामी बरसाते हैं। कुम्हार कुरुवरति नंबी को (जो माटी से फूल बनाकर स्वामी को समर्पित करता था) उसने जो मांगा, वह सब कुछ अतिदयालु स्वामी ने दे दिया था। तोंडमान चक्रवर्ती, पुराने जमाने में, श्री वेंकटेश के लिए मंदिर तथा शिखर का निर्माण कर ब्रह्मोत्सवों का भी आयोजन किया था। उससे स्वामी को अत्यंत अनुराग था। वह जहाँ भी जब भी बुलाता था, स्वामी वहाँ अवश्य जाते थे। अनंताल्वान् ने तिरुमल स्वामी को हर दिन परिमल भरित पुष्पमालाओं की सेवा समर्पित करने के लिए एक जलाशय का निर्माण करने का निर्णय ले लिया। उसके महदाशय की पूर्ति के लिए अपने उस भक्त को माटी ढ़ोने में, स्वामी ने हाथ बंटा था। स्वामी के मन में अपने भक्तों के प्रति अनंत वत्सलता के लिए ऐसे अन्य कई उदाहरण भी हैं। 'तिरुमलनंबी' श्री वेंकटेश के नित्याभिषेक के लिए हर दिन दस मील की दूरी पर स्थित पापविनाशन तीर्थ से पवित्र जलों को लाया करते थे। पैदल जाकर कलशों में तीर्थ जलों को सर पर रखकर लानेवाले उस महाभक्त की परीक्षा लेने के लिए व्याध के रूप में पवित्र जल के घडे को अपने तीर से मारकर श्री वेंकटेश ने छेद किया। तिरुमलनंबी, व्याध की आकतायी चेष्टा से व्याकुल हो, रो पडे कि उनके सेवा-कैंकर्य में आज संकट आ पडा है। अपने भक्त की वेदना को मिटाने के लिए श्री वेंकटेश ने अपने तीर से वहीं एक पर्वत की दरी में छेदकर आकाशगंगा के पवित्र स्त्रोत की सृष्टि की तथा स्वयं अंतर्धान हो गये। आज भी उस महाभक्त के वंशजों का तिरुमल में प्रथम तीर्थ कैंकर्य का गौरव प्राप्त है। 'तिरुकच्चिनंबी' जो कांची क्षेत्र में रहा करता था, उस पर भी स्वामी की अपार करुणा थी। हे स्वामी! हम भक्तों पर भी अवश्य करुणा की वर्षा करो।

संकीर्तना सौजन्य - ति.ति.दे. प्रकाशक, अन्नमाचार्य गीत-माधुरी, डॉ.पी.नागपद्मिनी

तिरुमल तिरुपति देवस्थान, तिरुपति।

ओंटिमिट्टा, श्री कोदंडरामस्वामी मंदिर

आंध्रप्रदेश, कडपा जिला, ओंटिमिट्टा प्रांत में विराजित श्री कोदंडरामस्वामी मंदिर बहुत प्राचीन श्रीराम मंदिर है। इस प्रांत को 'एकशिलानगर' भी कहते हैं। इस मंदिर का निर्माण जांबवंत ने किया। इस आलय से संबंधित दर्शन एवं सेवा का विवरण निम्नांकित हैं।

मंदिर का दर्शन समय

प्रातः 5.00 बजे से रात 9.00 बजे तक भगवान जी को दर्शन कर सकते है।

प्रातः 5.00 बजे से सुबह 7.30 बजे तक दर्शन

सुबह 7.30 बजे से सुबह 8.15 बजे तक प्रथम घण्टानाद

सुबह 8.15 बजे से सुबह 10.30 बजे तक दर्शन

सुबह 10.30 बजे से सुबह 11.15 बजे तक द्वितीय घण्टानाद

सुबह 11.15 बजे से सायं 5.30 बजे तक दर्शन

सायं 5.30 बजे से सायं 6.15 बजे तक तृतीय घण्टानाद

सायं 6.15 बजे से रात 8.45 बजे तक दर्शन

रात 8.45 बजे से रात 9.00 बजे तक एकांतसेवा

भगवान जी का सेवा टिकट विवरण

1) कल्याणोत्सव - रु.1,000/- दो व्यक्ति के लिए, समय सुबह-9.00 बजे को

2) अभिषेक - रु.150/- दो व्यक्ति के लिए, हर शनिवार, समय सुबह-6.00 बजे को

3) स्वर्ण पुष्पार्चन - रु.250/- एक व्यक्ति के लिए, हर रविवार, समय सुबह-8.30 बजे को

सूचना

मंदिर के प्रांगण में स्थित काउण्टरों में (या) ऑनलाइन के माध्यम से भी टिकट प्राप्त कर सकते है। कृपया भेंट हुण्डी में ही डालें।

सप्तगिरि

तिरुमल तिरुपति देवस्थान की
आध्यात्मिक सचित्र मासिक पत्रिका

वेङ्कटाद्रिसमं स्थानं ब्रह्माण्डे नास्ति किञ्चन।
वेंङ्कटेश समो देवो न भूतो न भविष्यति॥

वर्ष-56 अगस्त-2025 अंक-03

विषयसूची

वराह जयंती	डॉ.सी.आदिलक्ष्मी	07
श्री वेंकटाचल की महिमा	आचार्य आई.एन.चंद्रशेखर रेड्डी	10
श्री गणेश चतुर्थी	श्री ज्योतिन्द्र के.अजवालिया	14
तिरुपति श्रीवेङ्कटेश्वर (तिरुपति बालाजी)	प्रो.यद्दनपूडि वेङ्कटरमण राव	
	प्रो.गोपाल शर्मा	16
रक्षाबंधन	डॉ.एच.एन.गौरीराव	20
भगवान हयग्रीव	डॉ.जी.शेक षावली	23
गायत्री जपम्	श्री अवधेश कुमार शर्मा	25
श्री सिद्धिविनायक(गणेश) व्रतकल्प	डॉ.के.सुधाकर राव	27
महाबलशाली बलराम	डॉ.रमेशकृष्णा	35
तुलसी माहात्म्य	डॉ.जी.सुजाता	39
श्री वादिराजतीर्थ	डॉ.मैथिली प्र.राव	43
नींबू	डॉ.सुमा जोषि	46
अगस्त महीने का राशिफल	डॉ.केशव मिश्र	49
चित्रकथा - प्रथम पूजा आराध्य दैव		
श्री गणेश	डॉ.एम.रजनी	50
क्विज - 37		52

website: www.tirumala.org वेबसैट के द्वारा सप्तगिरि पढ़ने की सुविधा पाठकों को दी जाती है।
सूचना, सुझाव, शिकायतों के लिए - sapthagiri.helpdesk@tirumala.org

मुखचित्र - श्री लक्ष्मीदेवी।
चौथा कवर पृष्ठ - श्री गणेश महराज (चित्रकार - श्री पंचकर्ल रमेश)।

गौरव संपादक
श्री जे.श्यामला राव, I.A.S.,
कार्यनिर्वहणाधिकारी, ति.ति.दे.

प्रकाशक - संपादक,
प्रधान संपादक (F.A.C.)
डॉ.वी.जी.चोक्कलिंगम, M.A., Ph.D.,
P.G. Dip. in JMC

उपसंपादक
श्रीमती एन.मनोरमा, M.A., B.Ed.

मुद्रक
श्री आर.वी.विजयकुमार, B.A., B.Ed.
उपकार्यनिर्वहणाधिकारी,
मुद्रणालय & पुस्तक बिक्री केंद्र,
ति.ति.दे., तिरुपति।

स्थिरचित्र
श्री पी.एन.शेखर, मुख्य-फोटोग्राफर, ति.ति.दे., तिरुपति।
श्री बी.वेंकटरमण, सहायक छायाचित्रकार, ति.ति.दे., तिरुपति।

एक प्रति .. रु.20-00
वार्षिक चंदा .. रु.240-00
जीवन चंदा (12 वर्ष ही मात्र) .. रु.2,400-00
विदेशियों के लिए वार्षिक चंदा .. रु.1,030-00

अन्य विवरण के लिए
CHIEF EDITOR, SAPTHAGIRI, TIRUPATI - 517 507.
Ph.0877-2264543, 2264359, Editor - 2264360.

सूचना
मुद्रित रचनाओं में व्यक्त विचार लेखक के हैं। उनके लिए हम जिम्मेदार नहीं हैं।

संपादकीय

प्रकृति की रक्षा ही त्योहार का परम उद्देश्य है

गणेश चतुर्थी मानव जाति को अनेक संदेश देने वाला एक महत्वपूर्ण पर्व है। यह त्योहार प्रकृति के प्रति एक स्पष्ट संदेश देता है। कुछ त्योहार केवल श्रद्धा और भक्ति के रूप में घरों तक ही सीमित रहते हैं, लेकिन गणेश चतुर्थी उन विरले त्योहारों में एक है जिसे सामाजिक रूप से पूरे समुदाय के साथ मिलकर मनाया जाता है। प्रकृति माता, अर्थात् देवी पार्वती के पुत्र हैं गणपति। पार्वती के दिव्य शरीर को औषधीय आटा से उबटन लगाते समय गणेश का निर्माण हुआ। यही कारण है कि वे प्रकृति के अवतार माने जाते हैं। गणेश जी चूहा (मूषक) को अपना वाहन बनाया। गणेश का विशाल शरीर, जो फसल संग्रहण के लिए बनाए जाने वाले बड़े-बड़े कोठों जैसा होता है, उनकी कृषि से निकटता को दर्शाता है। उनका एकदंत हल का प्रतीक है। जब हम नई फसल पाते हैं, तो उसका अंश भगवान को नैवेद्य स्वरूप अर्पित करते हैं। फसल के कोठों के चारों ओर घास और डोरी बाँधी जाती है, ठीक वैसे ही जैसे गणेश जी की कमर में नागपाश बाँध होता है। गणेश विसर्जन के समय, किसान और व्यापारी लोग उस मिट्टी के थोड़ी मात्रा में अपने खेतों, कोठों और दुकानों में लाकर छिड़कते हैं - मानो कृषि और प्रकृति के प्रतीक गणेश को अपने जीवन में समाहित कर रहे हों।

गणेश चतुर्थी वर्षा ऋतु के आरंभ में आती है, जब पेड़ नई कोपलों से हरे-भरे हो जाते हैं, जैसे प्रकृति ने हरी चूनर ओढ़ ली हो। गर्मियों की तपती धूप से झुलसे हुए पेड़ अब ताजगी और हरियाली से भर जाते हैं। हमारे पूर्वजों ने गणेश चतुर्थी को कृषि और पर्यावरण की रक्षा से जोड़कर बहुत ही गहराई से इसे गढ़ा था। जब वर्षा की पहली बूंदें गिरती हैं, तो तालाबों और कुओं की मिट्टी नम हो जाती है। गाँव के लोग वहीं से मिट्टी लाकर गणेश की मूर्तियाँ बनाते हैं और पूजा करते हैं। यह परंपरा हर परिवार को तालाबों तक ले जाती थी, जहाँ हर कोई अपने घर के लिए थोड़ी मिट्टी लाता था। गाँव के युवक मिलकर बड़ी मात्रा में मिट्टी इकट्ठा करके विशाल गणेश प्रतिमाएँ भी बनाते थे। इससे तालाबों की गाद स्वाभाविक रूप से साफ होती थी, और जल संग्रहण की गुणवत्ता बढ़ जाती थी। पूजा में उपयोग होने वाले पत्रों के लिए विविध वृक्षों से पत्तियाँ तोड़ी जाती थीं - जिससे पेड़ों पर फिर से कोपलें फूटती थीं और उनमें जीवन का संचार होता था।

इस समय पेड़ों पर कीट पतंगे अधिक लगते हैं, लेकिन पत्तियाँ तोड़ने से यह कीट नष्ट हो जाते हैं और वृक्षों को राहत मिलती है। इसी वजह से भाद्रपद और आश्विन मासों में जब अधिक वर्षा होती है, तब ये पेड़ और अधिक पुष्ट हो जाते हैं- जिससे पर्यावरण संतुलित रहता है। गणेश चतुर्थी के नौ दिनों के बाद जब प्रतिमाओं का विसर्जन होता है, तो वही मिट्टी दोबारा तालाबों में जाकर पानी को नया जीवन देती है। तालाब की मिट्टी मजबूत होती है, जिससे उसकी दीवारें सुदृढ़ बनती हैं। पूजा में प्रयुक्त पत्रों का भी विसर्जित करने से उनके रस जल में मिल जाते हैं - जिससे जल में औषधीय गुण आ जाते हैं। यह पानी शुद्ध होने के साथ-साथ कृषि के लिए भी ऊर्जा देने वाला बन जाता है।

यह सब बातें उस समय की हैं जब गणेश चतुर्थी प्रकृति के साथ जुड़कर मनाई जाती थी। लेकिन अब का दृश्य बिल्कुल भिन्न है। आजकल मूर्तियों को भव्य बनाने के चक्कर में मिट्टी की जगह प्लास्टर ऑफ पेरिस का उपयोग किया जा रहा है - जो पर्यावरण के लिए अत्यंत हानिकारक है। इसी तरह रंगों में भी ऐसे रसायनों का प्रयोग किया जा रहा है जो स्वास्थ्य और प्रकृति दोनों को नुकसान पहुँचाते हैं। हमें अब फिर से पारंपरिक रंगों और विधियों की ओर लौटना चाहिए। पर्यावरण की रक्षा के लिए हमारी सोच में बदलाव आना जरूरी है। यह अत्यंत संवेदनशील विषय है और इसकी शुरुआत हमें अपने भीतर से ही करनी होगी। गणेश जी को भक्ति और श्रद्धा से पूजते हुए हमें उनकी कृपा प्राप्त करनी चाहिए और आने वाली पीढ़ियों के लिए प्रकृति के लाभों को सुनिश्चित करने की दिशा में विचार करना चाहिए। यही आज की गणेश चतुर्थी का सच्चा संदेश है - प्रकृति के करीब रहो, उसकी रक्षा करो, यही गणपति का आशीर्वाद है।

वराह जयंती

- डॉ.सी.आदिलक्ष्मी

वराह जयंती हिन्दू धर्म का एक महत्वपूर्ण पर्व है जो भगवान विष्णु के तीसरे अवतार वराह अवतार के जन्म का पर्व है। पौराणिक कथाओं के अनुसार भगवान विष्णु एक वराह अवतार में अवतरित हुए थे। अपने इस अवतार में उन्होंने हिरण्याक्ष नामक दैत्य का वध करके संपूर्ण जगत की रक्षा की थी। भगवान विष्णु ने वराह के रूप में कल्याणकारी अवतार बुरी शक्तियों का अंत करने केलिए लिया था, ऐसे में उनकी जयंती पर पूजा करने वाले मनुष्य के सभी पाप नष्ट होते है। मान्यता है कि इस दिन भगवान विष्णु और उनके वराह स्वरूप की पूजा करने से इंसान के जीवन में खुशियों का संयोग बनता है। वराह जयंती हर साल भाद्रपद मास की तृतीय तिथि को मनाई जाती है।

वराह नाम से विष्णु के तीन अवतार थे नील, यज्ञ, कपिल, आदि और श्वेत। भगवान विष्णु के वराह अवतार के हिरण्याक्ष वध की कथा लोकप्रिय है। लेकिन वे प्रथम आदिवराह थे। आदिवराह से पहले नीलवराह और उनके बाद श्वेतवराह हुए जिनके बारे में कम ही लोग जानते होंगे। तीनों के काल को मिलाकर वराह काल कहा गया जो वर्तमान में भी जारी है।

नीलवराह काल, नीलवराह ही यज्ञ वराह थे :

पद्मकल्प के अंत के बाद महाप्रलय हुई। सूर्य के भीषण ताप से धरती के सभी वन-जंगल आदि सूख गए। समुद्र का जल भी जल गया। ज्वालामुखी फूट पड़े। सघन ताप से जल बाष्प बनकर आकाश में मेघों के रूप में स्थिर होता गया। अंत में महा जलप्रलय शुरू हुई। चक्रवात उठने लगे और देखते ही देखते समस्त धरती जल में डूब गई। यह देख ब्रह्म को चिंता हुई उन्होंने जल में निवास करते विष्णु का स्मरण किया और फिर विष्णु ने नीलवराह रूप में प्रकट हो धरती का कुछ हिस्सा जल मुक्त किया।

पुराणों के अनुसार इस काल में महामानव नीलवराह देव ने अपनी पत्नी नयनादेवी के साथ अपनी संपूर्ण वराही सेना प्रकट की और धरती को जल से बचाने को तीक्ष्ण दरातों पाद प्रहारों, फावड़ों, कुदालियों और मौतियों से धरती समतल कर रहने योग्य बनाई। इसके लिए उन्होंने

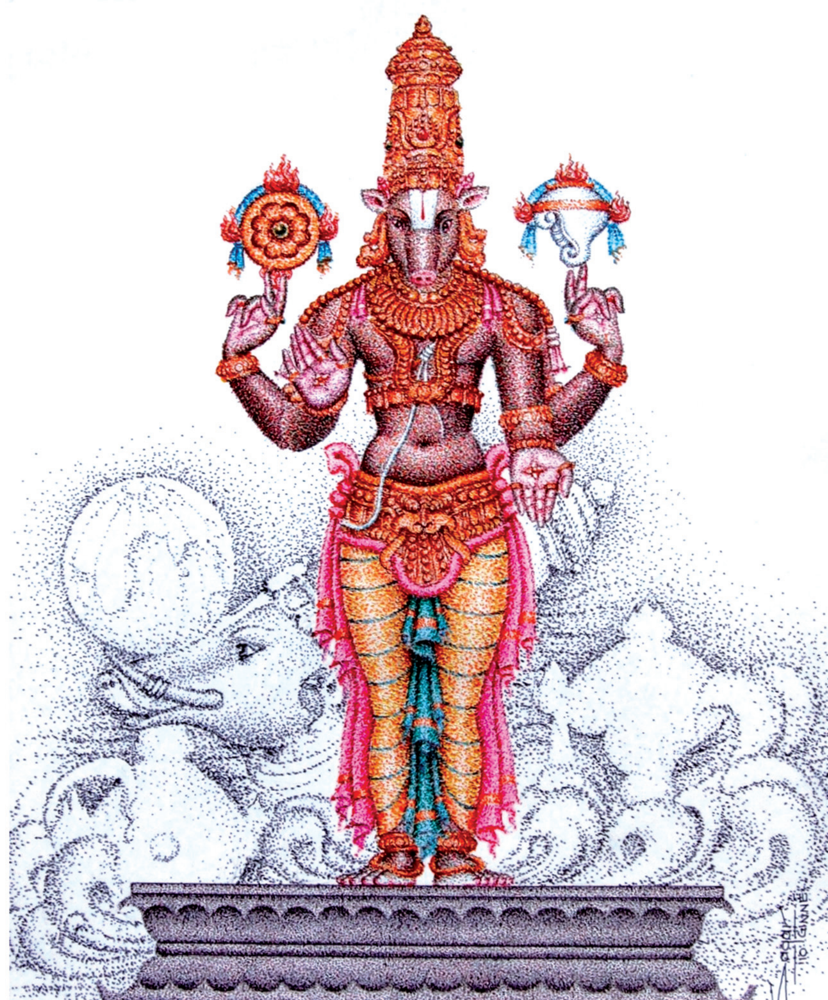

पर्वतों का छेदन तथा गर्तों के पूरण हेतु मृत्तिका के टीलों को जल में डालकर भूमि को बड़े श्रम से समतल करने का प्रयास किया। यही यज्ञ था इसलिए नीलवराह को यज्ञवराह भी कहा गया। प्रलयकाल का जल उतरने पर भगवान के प्रयत्नों से अनेक सुगंधित वन और पुष्कर-पुष्करिणी सरोवर निर्मित हुए, वृक्ष, लताएँ, उग आईं और धरती पर फिर से हरियाली छा गई। संभवतः इसी काल में मधु और कैटभ का वध किया गया था।

आदिवराह ही कपिल वराह भी थे :

नीलवराह कल्प के बाद आदिवराह कल्प शुरू हुआ। इस कल्प में भगवान विष्णु ने आदिवराह नाम से अवतार लिया। यह वह काल था जब कि दिति और कश्यप के दो असुर पुत्र हिरण्यकश्यप और हिरण्याक्ष का आतंक था। दोनों को ही ब्रह्माजी से वरदान मिला हुआ था। हिमयुग समाप्ति की ओर चल रहा था। ऋषि कश्यप की सृष्टि में अर्थात उनके कुल विस्तार के समय भगवान विष्णु ने आदिवराह का अवतार लिया। आदिवराह को कपिलवराह भी कहा गया है। वराह इसलिए कि उन्होंने वराह जाति में ही जन्म लिया था। तब वराह अर्थात् वनवासी जाति थी। भगवान आदिवराह ने नीलवराह का कार्य ही आगे बढ़ाया था।

हिरण्याक्ष का वध :

ऋषि कश्यप पुत्र हिरण्याक्ष का दक्षिण भारत पर राजा था। हिरण्याक्ष भगवान वराह रूपी विष्णु के पीछे लग गया था और उनके धरती निर्माण कार्य की खिल्ली उड़ाकर उन्हें युद्ध को ललकारता था। वराह भगवान ने रसातल से बाहर निकलकर धरती समुद्र के ऊपर स्थापितकर दी तब उनका ध्यान हिरण्याक्ष के नगर को घेर लिया। अंततः हिरण्याक्ष का अंत हुआ। उस समय देवताओं ने भगवान वराह पर पुष्पवृष्टि करते हुए उनकी तरह-तरह से स्तुति की। भगवान वराह पृथ्वी को स्थापित करके अंतर्धान हो गए। इस प्रकार श्वेतवराह कल्प की सृष्टि प्रारंभ हुई। भूदेवी को ब्रह्मांड में उसके स्थान पर पुनर्स्थापित किया। यह कहा जाता है कि वराह कवच का नित्य पाठ करने से मनुष्य भयमुक्त हो जाता है। सभी रोग, कष्ट भूत-बाधा एवं शत्रु के नाश के लिए इसका पाठ करना चाहिए। शत्रु द्वारा किये गये किसी भी तंत्र या अभिचार का कोई दुष्प्रभाव नही पड़ता और सभी समस्त कष्टों का नाश होता है। इस वराह कवच का पाठ अपार धन-समृद्धि की प्राप्ति होती हैं।

आद्यं रङ्गमिति प्रोक्तं विमानं रङ्ग सञ्ज्ञितम्
श्रीमुष्णं वेङ्कटाद्रिं च सालग्रामं च नैमिशम्
तोताद्रिं पुष्करं चैव नरनारायणाश्रमम्
अष्टौ मे मूर्तयः सन्ति स्वयं व्यक्ता महीतले

वराह जयंती की पूजा विधि इस प्रकार है :

1. सुबह जल्दी उठकर स्नान करें और साफ-सुथरे कपड़े पहनें।
2. घर के मंदिर में भगवान वराह की मूर्ति या चित्र स्थापित करें।
3. भगवान वराह की गंगाजल से स्नान कराएँ और फिर पंचामृत से स्नान कराएँ।
4. भगवान वराह को नए वस्त्र और फूल अर्पित करें।
5. भगवान वराह को फल, मिठाई और अन्न का भोग लगाए।
6. भगवान वराह की आरती और पूजा करें।
7. वराह जयंती पर हिरण्याक्ष राक्षस के वध की कथा पढ़े या सुने।
8. दिन भर व्रत रखें और शाम को पूजा के बाद व्रत का पारायण करें।
9. गरीबों और ब्राह्मणों को दान दें।

भगवान विष्णु का यह अवतार त्याग का प्रतीक माना जाता है। कहानी अराजकता के बीच शांति लाने को दर्शाती है। यह बुराई पर अच्छाई की जीत को दर्शाता है। क्योंकि हिरण्याक्ष पराजित होता है।

ध्यानम्

ओं श्वेतं वराहवपुषं क्षितिमुद्धरन्तं
शङ्खारिसर्व वरदाभय युक्त बाह्यम्।
ध्यायेन्निजैश्च तनुभिः सकलैरुपेतं
पूर्णं विभुं सकलवाञ्छितसिद्धयेऽजम्।।

वराह कवच हमें संसार के समुद्र को पार करने में मदद करता है। यह करोड़ों बुरे कर्मों को नष्ट कर देता है।

माघ माह की वराह द्वादशी भगवान विष्णु के वराह अवतार को समर्पित है। यह माघ महीने में अर्धचंद्र चरण शुक्लपक्ष के बारहवें दिन दशमी को मनाया जाता है। हिन्दू पौराणिक कथाओं में कहा गया है इस दिन विष्णु ने राक्षस हिरण्याक्ष से धरती माता को बचाया था। हिंदुओं का मानना है कि इस दिन का पालन करने से मोक्ष मिलता है। ज्योतिष के अनुसार वराह जयंती के दिन व्रत आदि करने वाले व्यक्ति को हर धार्मिक कार्य को करने से पहले संकल्प लेना चाहिए। फिर चाहे वो मंत्र जाप का संकल्प ही क्यों न हो। ऐसा माना जाता है इससे जातक द्वारा की गई पूजा सफल होती है। संकल्प लेने से पहले एक कलश में भगवान वराह की प्रतिमा स्थापित कर विधि विधान सहित षोडशोपचार से पूजा करें।

वराह मंत्र

ॐ वराहाय नमः
ॐ सूकराय नमः
ॐ धृतसूकररूप केशवाय नमः।

उपरोक्त मंत्रों का जाप करने से आपकी समस्या का समाधान निकल जाता है। वराह जयंती देश के कई हिस्सों में बहुत धूमधाम से मनाई जाती है। वहीं देश के कुछ मंदिर ऐसे भी हैं जहाँ इस त्योहार में भगवान के दर्शन केलिए भक्तों की भीड़ लगी रहती है। ऐसा ही एक मंदिर तिरुमल में स्थित 'भुवराह स्वामी मंदिर है' इस मंदिर का निर्माण लगभग 16वीं शताब्दी में हुआ था। यहाँ वराह जयंती के दिन भगवान विष्णु के वराह अवतार की मूर्ति को नारियल के पानी से नहलाया जाता है फिर उनकी पूजा की जाती है।

ऐसा ही एक और पुराना मंदिर भारतीय राज्य मध्यप्रदेश के छतरपुर क्षेत्र में भी मौजूद है जिसका निर्माण 11वीं शताब्दी में हुआ था। यह मंदिर वराह मंदिर 'खजुराहो' के नाम से प्रसिद्ध है और इस स्मारक को यूनेस्को विश्व धरोहर में भारत का एक धरोहर क्षेत्र भी माना गया है। भगवान वराह के जन्मदिन पर यहाँ भव्य आयोजन किया जाता है।

वराह जयंती पूजा के लाभ

भगवान वराह एक शक्तिशाली देवता है, जो साहस से भरपूर है। जब आप उनकी पूजा करते हैं, तो वे आपको वीरता का आशीर्वाद देते हैं, आपको साहस से भर देते है, और आपके मन से भय और चिंताओं को दूर कर देते है। भगवान वराह पूजा आपको ईमानदारी शक्ति, दयालुता और सच्चाई विकसित करने में मदद करती है। यह आपके घर में और मन में नकारात्मक ऊर्जा और विचारों को दूर करने में भी मदद करता है, तथा आपके मन सकारात्मक ऊर्जा से भर देता है। यह पूजा अनुष्ठान आपको धन और समृद्धि से भरा जीवन प्रदान करता है।

ॐ नमो भगवते वराह रूपाय भूर्भुवः स्वः
पतये भूपतित्वं मे देहि द दापय स्वाहा।

यह विष्णु 33 अक्षरों वाला मंत्र है। इसे वराह विष्णु मंत्र के नाम से भी जाना जाता है। विष्णु का यह मंत्र विष्णु के तीसरे अवतार को समर्पित है। संसार के रक्षक भगवान विष्णु ने पृथ्वी पर दुष्ट शक्तियों के राजा हिरण्याक्ष के चंगुल से संसार की रक्षा के लिए वराह के रूप में अवतार लिया था। विष्णु ने हिरण्याक्ष का नाश किया और संसार को बचाया। इस मंत्र जाप से भगवान वराह का आशिर्वाद सदा आपके ऊपर रहता है।

(गतांक से)

श्री वेंकटाचल की महिमा

(हिंदी गद्यानुवाद)

चतुर्थ आश्वास

तेलुगु मूल

मातृश्री तरिगोंडा वेंगमांबा

हिंदी अनुवाद

आचार्य आई.एन.चंद्रशेखर रेड्डी

श्रीहरि के द्वारा अपनी चिंता को वकुला से बताना :

अपनी आँखें धीरे-धीरे खोल कर काम विकार मन में रहते हुए श्रीहरि ने इस रूप में कहा। हे जननी! प्रेम से तुम पूछ रही हो। मैं बताऊँगा। सुनो। एक हाथी का पीछा करते हुए मैं पर्वत से उतर कर गया। वहाँ सामने एक पुष्प वन दिखाई दिया। उस वन में एक सुंदरी विद्युल्लता की तरह अत्यंत सुंदर लावण्ययुक्त सर्वलक्षण कलित सामने दिखाई दी। उस कांता के पैर कोमल कोंपल-पल्लव हैं। कटि सिंह जैसी है। जांघें केले के पेड के समान है। कमर गगन समान है। हस्त लाल कमल जैसे हैं। उस के स्तन सोने के कलश हैं। कंठ शंख जैसा है। सुंदर दर्पण जैसे गाल। चेहरा मानो शहद का कुँआ जैसा है। दाँत जुही के फूल जैसे हैं। कान श्री लक्ष्मी जैसे हैं। नासिका तिल पुष्प जैसी है। उस ललितांगी की आंखें मीन जैसी हैं। भौहें सुंदर कलाओं से भरी हैं। मुख उस का चंद्र बिंब जैसा है। सर के बाल भ्रमर के पंख जैसे हैं। हे जननी! उस कामिनी के सौंदर्य का वर्णन ब्रह्म भी नहीं कर सकते हैं। मैं कैसे बता सकता हूँ? मेरे मन में वह बस गयी है। उस के साथ मेरा प्रियानुबंध बैठ गया है। मैं उससे विवाह करना चाहता हूँ। हे जननी! अगर ऐसा नहीं होगा तो मैं सहन नहीं कर पाऊँगा। सर की चोट को ठीक करनेवाली तुझे छोड कर जाने का कारण यही है। मुझे उस की चिंता है। संतोष के साथ अगर मैं उसे प्राप्त नहीं कर सकता तो मैं सहन नहीं कर पाऊँगा। अब तुम ही शीघ्रता से उसे मेरे पास ले आओ। तब मैं संतोष के साथ यहीं रहूँगा। और किसी दूसरी जगह तुझे छोड कर नहीं जाऊँगा। इस रूप में हरि के कहने से तब वकुला मालिका ने हरि की ओर देखकर इस रूप में कहा। ‘‘हे पुत्र! तुम ने जिस लतांगी को देखा है, उस का कुल, गोत्र सुनाओ। माता-पिता के विवेक और उस के विवेक के बारे में मुख्य रूप से जानने की जरूरत है। विवाह करने योग्य कन्या हो तो अवश्य विवाह करवा देंगे। उस का नाम क्या है? कहाँ रहती हैं? ठीक ठीक बताओ। विवाह करवा दूंगी।’’ वकुला मालिका की इन बातों को सुनकर तब वासुदेव ने महा मोह से इस रूप में कहा। हे जननी! उस क्रम को निश्चय ही सुनो। सूर्य

वंशी आकाश राज ने संतान के न होने से महा पुत्रकामेष्टि यज्ञ किया। उस क्रम में भूमि को जोतने से भूमि के अंदर से एक पद्म प्राप्त हुआ। उस पद्म में एक बालिका को देखकर उसे महल में लाकर उस आकाश राज ने उसे पाला पोषा। उसका नाम पद्मावती है। अगर धरती पर मेरे साथ उस का विवाह ब्रह्म ने निश्चय किया है तो मैं जीवित रहूँगा। नहीं तो मैं यहाँ नहीं रह पाऊँगा। ऐसे में मुझे वैकुंठ पुर लौट जाना होगा।

“हे माँ! सुनो। वह कन्या लक्ष्मी के समान है। इसलिए जन्म जन्मांतर पुण्य से उसी पुरुष को प्राप्त होगी। बाकी लोगों को प्राप्त नहीं होगी। पूर्व पुण्य फल से उस के साथ मैं बात कर पाया। ऐसी सुंदरी को छोड कर आ गया हूँ। मुझे अन्न जल कैसे अच्छा लगेंगे। अगर ऐसी कन्या मुझे प्राप्त होगी तो मैं जीवित रहूँगा। नहीं तो जीवित नहीं रहूँगा। यह सत्य है। उस पद्मावती ने मेरा विरोध करते हुए मुझ पर अपनी सखियों को भेज कर पथराव करवाया है। उस पथराव से मेरा घोडा घायल होकर नीचे गिर गया। तब भागता हुआ इस पर्वत पर चढ कर मैंने अपने को बचा लिया। ब्रह्म ने ऐसी सुंदरी को बना कर उसे कठोर बुद्धि दी है। उसने मुझे इतना कष्ट दिया है। मुझे चिंता दी है। ब्रह्म ने उस कांता को मेरे लिए बनाया है। इसलिए तुम अब मेरी सहायता करके उस कन्या को प्राप्त करने का उपाय बताओ। ऐसा करेगी तो उस के माता-पिता के, सहोदरादि बंधुओं के साथ मेरे भक्तजन प्रह्लाद, नारदादि परम भागवोत्तमों को साथ भेजूंगा। अनेक गो, भू, हिरन्यादि दान देने से जितना पुण्य होगा उतना पुण्य मांगल्य धारण करानेवालों को मैं दूंगा। इसलिए तुम मुझ से पद्मावती के साथ मांगल्य धारण कराओ।'' आगे इस रूप में कहा। “उचित शुभ लग्न में उस के साथ मेरा विवाह कराने से तुम्हारे प्रति प्रीति बढेगी। इसलिए शीघ्र ही विवाह कराओ।'' हरि ने उत्साह से कहा। तब स्नेह से वकुला ने कहा। “हे पुत्र! यह परमाश्चर्य की बात है कि धरती में पद्म से इस प्रकार सुंदरी का जन्म होने का क्या कारण है? तुम मोद से इस के बारे में बताओ।'' यह सुन कर हरि ने इस रूप में कहा।

राम कथा को हरि वकुला को सुनाना : पद्मावती (वेदवती) का पूर्व वृत्तांत :

हे माँ! अच्छी तरह सुनो। पूर्व काल में त्रेतायुग में दशरथ के पुत्र के रूप में जन्म लेकर, विश्वामित्र के यज्ञ की रक्षा करके, शिव धनु को तोड कर, जनक की पुत्री के साथ विवाह करके, अयोध्या पहुँचकर, अपने पिता की आज्ञा पर सीता और लक्ष्मण को साथ लेकर राम वन वास पर गया था। तब जंगल में जानकी एक माया मृग को देखकर शीघ्र उसे पकड कर लाने के लिए मुझ से कहा था। मुझे ढूंढते लक्ष्मण भी आ गया था। तब रावण नामक एक राक्षस वहाँ पर आकर सीता को पकड कर रथ पर लाद कर ले गया। तब सीता 'रामा' कहती व्याकुल हुई। उसे किसी ने नहीं छुडाया। तब अग्नि ने

रावण से पूछा था कि 'हे दशग्रीव! यह सीता नहीं है। यह कौन है?' तब सुनो। राम ने उस सीता को मेरे पास छोड कर एक ब्राह्मण की स्त्री को सीता की तरह बना कर उस में रखकर चले गए। तुम्हारे स्नेह के कारण यह रहस्य तुम को बताया। इस रूप में शांति से बता कर सीता का वेश वेदवती को डाल कर ले आकर रावण को सौंपा। वह मूर्ख रावण सीता को वहाँ छोड कर उस वेदवती पर कामुक होकर अपने साथ ले गया। अशोक वन में उसे रखा। रामा! कहते अपने को वह वेदवती सीता की तरह वहाँ पर अशोक वन में रही। इस रूप में वेदवती ही रावण के पास बंदी के रूप में रही। अग्नि ने सीता को अपनी पत्नी के पास छिपा कर रखा। मैंने मनुष्य के वेश में उस रावण से युद्ध करके उस का संहार किया। सीता को पाने के लिए मैंने सागर पर सेतु को बांधा। रावण, कुंभकर्ण आदि मुख्य राक्षसों का संहार किया। सब की प्रशंसा प्राप्त करके रावण के पास बंदी के रूप में रहनेवाली सीता को देखकर 'अगर तुम अग्नि में प्रवेश करके आने से ही तुम को स्वीकार करूँगा।' ऐसा कहा। तब वह सीता अग्नि में सुरुचिर भक्ति से कूद पडी थी। तब दो सीताएँ अग्नि में खडी होने से सीता को बुला कर मैंने पूछा था कि 'हे री! तुम्हारे साथ खडी वह दूसरी कौन है? सच सच बताओ!' तब सीता ने कहा ''दशकंठ मुझे पकड कर लाते समय मैं चिंता का शिकार हुई थी। तब मैंने अग्नि देव से प्रार्थना की थी। अग्नि देव ने अपने पास रहनेवाली वेदवती को लाकर रावण को सौंपा और मुझे अपने में छिपा लिया था। वेदवती ने लंका पहुँचकर रावण की सारी हिंसाओं को झेला है। उस ने मेरे लिए यह सब कुछ सह लिया है। तुझ पर इच्छा से तप करनेवाली कन्या होने के कारण इस कन्या पर दया करके सत्करुणा से इस के साथ प्रेम से विवाह कर लो।''

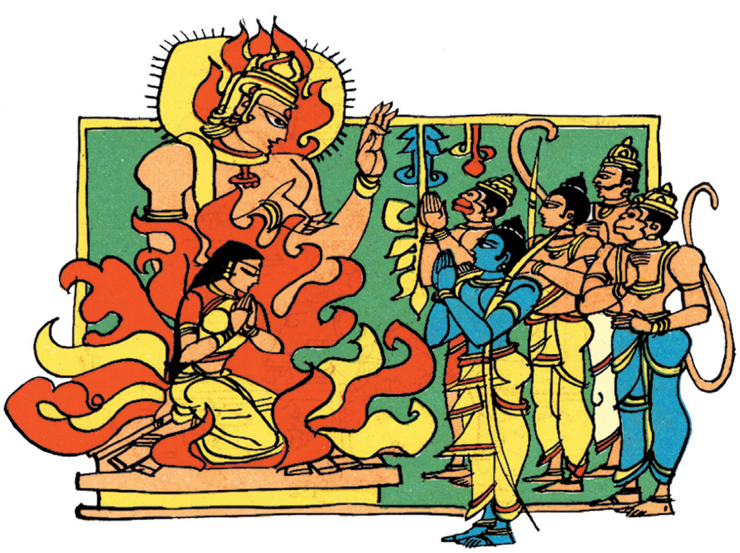

इस रूप में सीता ने मुझ से कहा था। तब मैंने इस रूप में कहा था। ''हे सुंदरी! अब मैं एकपत्नीव्रत हूँ। अब मैं इस सुंदरी के साथ विवाह नहीं कर सकता। हे रमणी! अगले जन्म में बडे आनंद से इस के साथ विवाह करूँगा। वह कब है कि अठ्‌टाईस द्वापरांतर के बाद कलियुग में अनेक भक्तजनों की रक्षा के लिए वेंकटाद्री पर अवतार लेने पर इस कन्या के साथ मैं विवाह करूँगा। तब तक यह कन्या ब्रह्म लोक में रहेगी। बाद में जब मैं वेंकटाद्री पर अवतरित होने पर तब यह भामिनी भूमि से उदय होगी, तब मैं इस के साथ विवाह करूँगा।'' ऐसा मैंने सीता से कहा था। यह पूरा रहस्य सिर्फ मुझे ही मालूम है। हे जननी! इससे बढ कर जनक को तथा वेदवती को इस रहस्य के बारे में मालूम है। किसी पराये को नहीं मालूम इस रहस्य को आज मैंने तुम को बताया। इसे अपने मन में ही छिपा कर रखो।

उस के बाद अपनी महिमा से मैंने उस वेदवती को अग्नि में ही छोड कर सुरुचिर सीता को प्राप्त किया। विभीषण को पट्टाभिषिक्त बनाकर, लक्ष्मणादि कपि वीरों के साथ अयोध्य नगर पहुँचकर जन रंजक रूप से शासन किया। काल

बीतता गया। तदुपरांत द्वापरयुग में मैं ही वसुदेव को कृष्ण के रूप में पैदा हो गया। यही वल्मीक में पडा रहा। इस रूप में वकुला को हरि ने अपना पूर्व वृत्तांत सुनाया। यह सुन कर वकुला ने संतोष के साथ 'वेदवती के पूर्व वृत्तांत के बारे में बताओ' कहा तो हरि ने इस रूप में बताया। सुनो वकुला देवी! वेदवती की पूर्व कथा बताऊंगा। वह ऐसी है कि विप्र कन्या वेदवती ने मुझ पर मोहित होकर पति के रूप में मुझे पाने के लिए तप किया। तब उसे देखकर उस पर कामुक होकर रावण ने उसे पाने की कोशिश की। किंतु वेदवती ने उस का विरोध किया। वेदवती अपनी देह पर आशा छोड कर विश्राव के पुत्र रावण को देखकर गुस्से में उससे कहा। 'मैं अवश्य ही तुझे हरि के हाथों से संहार कराऊंगा।' ऐसी प्रतिज्ञा वेदवती ने की है। यह कहते वेदवती अग्नि में कूद पडी।

तब अग्नि ने वेदवती को अपने पास छिपाकर, रावण के द्वारा सीता का अपहरण करते समय वेदवती को सीता से भी सुंदर बना कर सीता के रूप में उसे रावण को सौंप दिया। वेदवती को अपनी पत्नी स्वाहा देवी के पास छोड दिया। रावण के साथ वेदवती लंका पहुँचकर रावण को मेरे हाथों से संहार करवाया। इस रूप में वेदवती ने रावण से अपना बदला ले लिया। फिर अग्नि के पास रहनेवाली सीता को मुझे सौंप दिया। स्वयं वेदवती उस समय ब्रह्म लोक चली गयी। वहाँ पर महा तप किया।

कुछ समय के बाद वही वेदवती पद्म में घुस कर अवनि में आकाश राज को प्राप्त हुई।

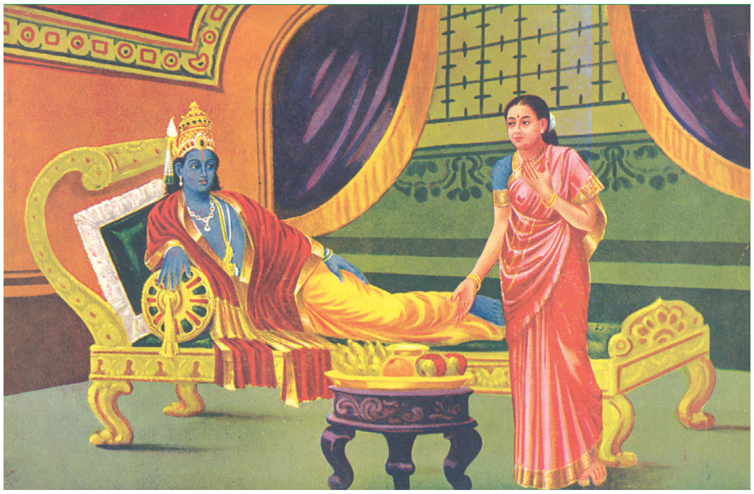

वही वेदवती पद्मावती के रूप में मुझे मोहित करके अपने आप को भूल गयी है। इस रूप में श्रीनिवास ने वेदवती के पूर्व वृत्तांत और पद्मावती के जन्म के बारे में वकुला को सुनाया। यह सुन कर वकुला ने स्वामी को देखकर कहा। "हे देव! महानुभाव! पहले मैं अज्ञानी होकर आप को मनुष्य मात्र के रूप में देखा। आप तो साक्षात ब्रह्म हैं। आप ही ब्रह्म के पिता हैं। आप ही महानिर्वाण संधात हैं। आप ही विष्णु हैं, आप ही रामचंद्र हैं, आप ही कृष्ण देव हैं, आप ही वेदात्म हैं, आप ही सर्वतोमुख हैं, आप ही कर्ता हैं, आप ही भोक्ता हैं, आप ही विश्व हैं, आप ही वराह देव और शैलाधिप हैं। हे तोयज लोचन! आप की इस माया को बिना जाने अपने पुत्र के रूप में आप से प्रेम किया। हे महात्मा! आप ही ईश्वर है, यह मैं जान नहीं पायी।" यह सुन कर विष्णु ने कहा। "यहाँ पर आप ने मेरी चोट को ठीक करके माँ के रूप में वात्सल्य दिया। आप का ऋण मैं कैसे चुका पाऊँगा। इस की चिंता मुझे हो रही है।" कहते विष्णु वकुला पर अपनी माया को डाल कर उसे वात्सल्य सद्बुद्धि को प्रदान करके फिर से इस रूप में कहा। "हे माँ! तुम मेरा विवाह कराओ" स्नेह से "उसी समय विवाह की बात चलाने के लिए कहा।" तब वकुला देवी ने हरि की ओर देखकर "हे पुत्र! अब वह कन्या किस नगर में है। उस नगर के बारे में बताओ।" इस रूप में वकुला के पूछने पर हरि ने कहा।

क्रमशः

श्री गणेश चतुर्थी

- श्री ज्योतिन्द्र के. अजवालिया

गणेश चतुर्थी हिन्दुओं का एक प्रमुख त्योहार है। यह त्योहार भारत के विभिन्न भागों में मनाया जाता है किन्तु महाराष्ट्र व कर्नाटक में बडी धूमधाम से मनाया जाता है। पुराणों के अनुसार इसी दिन भगवान श्री गणेश जी का जन्म हुआ था। गणेश चतुर्थी के दिन भगवान गणेशजी की पूजा की जाती है। कई प्रमुख जगहों पर भगवान गणेश की बड़ी प्रतिमा स्थापित की जाती है।

11 दिन तक गणेशजी की उपासना की जाती है।

इस प्रतिमा का 11 दिनों तक पूजन किया जाता है। बड़ी संख्या में आस-पास के लोग दर्शन करने पहुँचते है।

(कोई एक दिन तो कोई तीन दिन, कोई पांच दिन घर में गणेश की स्थापना करते है।)

11 दिन बाद गानों और बाजों के साथ गणेश प्रतिमा को किसी तालाब, महासागर इत्यादि जल में विसर्जित किया जाता है। गणेशजी को लंबोदर के नाम से भी जाना जाता है।

गणेश उत्सव की शुरुआत

गणेश उत्सव की शुरुआत महाराष्ट्र की राजधानी पुणे से हुई थी, गणेश चतुर्थी का इतिहास मराठा साम्राज्य के सम्राट छत्रपति शिवाजी महाराज से जुड़ा है मान्यता है कि भारत में मुगल शासन के दौरान अपनी सनातन संस्कृति को बचाने हेतु छत्रपति शिवाजी ने अपनी माता जीजाबाई के साथ मिलकर गणेश चतुर्थी यानी गणेश महोत्सव की शुरुआत की थी।

भारतीय स्वतंत्रता सेनानी लोकमान्य तिलक ने 1892 में हिंदू सभाओं पर औपनिवेशिक ब्रिटिश सरकार के प्रतिबंध को दूर करने के लिए इसे एक साधन के रूप में बढ़ावा दिया था। लोकमान्य तिलक ने पुणे और मुंबई के गिरगांव में इस उत्सव की शुरुआत की थी।

पुराणानुसार

गणेशपुराण के मत से यह गणेशावतार भाद्रपद शुक्ल चतुर्थी को हुआ था। गण+पति-गणपति। संस्कृतकोशानुसार 'गण' अर्थात पवित्रक। 'पति' अर्थात स्वामी 'गणपति' अर्थात पवित्रकों के स्वामी।

आदि गणेश

गणेश का अर्थ होता है गणों का ईश और आदि का अर्थ होता है सबसे पुराना यानी सनातनी।

गणेश जी के कुछ अवतार हैं

वक्रतुंड, एकदंत, महोदर, विकट, गजानन, लंबोदर, विघ्नराज और धूम्रवर्ण।

अवतारों का वर्णन :

1. **वक्रतुंड :** इस अवतार में गणेश जी की सूंड घुमावदार होती है।
2. **एकदंत :** इस अवतार में गणेश जी का एक ही दांत होता है।
3. **महोदर :** इस अवतार में गणेश जी का पेट बड़ा होता है।
4. **विकट :** इस अवतार में गणेश जी का रूप क्रोधी और भयानक होता है।
5. **गजानन :** इस अवतार में गणेश जी का चेहरा हाथी जैसा होता है।
6. **लंबोदर :** इस अवतार में गणेश जी का पेट बड़ा और लटकता हुआ होता है।
7. **विघ्नराज :** इस अवतार में गणेश जी का रूप बाधाओं का दूर करने वाला माना जाता है।
8. **धूम्रवर्ण :** उस अवतार में गणेश जी का रंग धूमिल से होता है।

ये आठ अवतार गणेश जी के विभिन्न रूपों का प्रतिनिधित्व करते हैं, जो विभिन्न स्थितियों और परिस्थितियों में बाधाओं को दूर करने में मदद करते हैं।

व्रत

भाद्रपद-कृष्ण-चतुर्थी से प्रारंभ करके प्रत्येक मास के कृष्णपक्ष की चंद्रोदयव्यापिनी चतुर्थी के दिन व्रत करने पर विघ्नेश्वर गणेश प्रसन्न होकर समस्त विघ्न और संकट दूर कर देते हैं।

गणेश चतुर्थी पर विशेष उपासना

हमारे पूजा घर में गणेशजी का स्थापन करने से पूर्व गणेश अथर्वशीर्ष मंत्रों के उच्चारण करके पंचामृत और केसर गुलाब जल आदी से अभिषेक करने का विधान है। बाद में स्थापन करके पंचोपचार पूजा आदी करना चाहिए। पूजा में दूब घास अवश्य उपयोग करना चाहिए, इससे गणेश जी अधिक प्रभावित होते है।

गणेशजी के सामने ''गणपती स्मरण'' न्यास - संकट नाशन गणेश स्तोत्र-अथर्वशीर्ष-गणेश सहस्र नाम-आदी का पाठ करने से भी मनुष्य की मनोकामना पूर्ण होती है।

पकवान और प्रसाद

मोदक भारत के महाराष्ट्र राज्य की एक प्रसिद्ध मिठाई है, इसे विशेष रूप से गणेश चतुर्थी पर प्रसाद के रूप में चढाया जाता है।

चंद्र दर्शन से बचाव

प्रत्येक शुक्ल पक्ष चतुर्थी को चंद्रदर्शन के पश्चात् व्रत को आहार लेने का निर्देश है, इसके पूर्व नहीं। किंतु भाद्रपद शुक्ल पक्ष की चतुर्थी को रात्रि में चन्द्र-दर्शन निषिद्ध किया गया है। जो व्यक्ति इस रात्रि को चन्द्रमा को देखते हैं उन्हें झूठा-कलंक प्राप्त होता है।

ऐसा शास्त्रों का निर्देश है। यह अनुभूत भी है। इस गणेश चतुर्थी को चन्द्र-दर्शन करने वाले व्यक्तियों को दोष परिणाम अनुभूत हुए, इसमें संशय नहीं है। यदि जाने-अनजाने में चन्द्रमा दिखा भी जाए तो निम्न मंत्र का पाठ अवश्य कर लेना चाहिए।

'सिहः प्रसेन मवधीत्, सिंहोजाम्बवता हतः।
सुकुमारक मारोदीः, तव ह्येषस्स्यमंतकः।।'

जय जय श्री गणेश।

(गतांक से)

तिरुपति श्रीवेङ्कटेश्वर

(तिरुपति बालाजी)

हिन्दी अनुवाद - प्रो.यड्डनपूडि वेङ्कटरमण राव
प्रो.गोपाल शर्मा

संख्या 40 श्री गोविंदराजस्वामी मंदिर से संबद्ध है। इसका समय राजराज चोल III का समय (सन् 1235 ई.) था। राजराज चोल के 19वें शासन वर्ष में इसको लिखवाया गया था। इससे यह समाचार मिलता है कि उस समय से कुछ पहले पेरिय - नाट्टवर ने जो नाडु की समिति के सदस्य या कुछ गाँवों के समूह के सदस्य थे और कुडऊरु-नाडु के निवासी थे, तिरुपति के श्री गोविन्दपेरुमाल के मंदिर में श्री तिरुमंगैयाल्वार की मूर्ति की स्थापना की। उससे संबन्धित आदेश में अमुदु-पडि (अन्न प्रसाद) और शात्तु-पडि (फूल, सुगंध द्रव्य आदि से अलंकरण) से संबन्धित सभी पक्षों पर समिति - कक्ष में तिरुविलंकोइल (नये मंदिर) जो तिरुचानूर में स्थापित किया गया है। उसके लिए विचार किया गया तथा उसी संदर्भ में कुडवूरार के निवासियों के द्वारा अर्पित भूदान को स्वीकृत किया गया। इस से यह विदित होता है कि 'नाडु' में 'नाडु' के सदस्यों द्वारा अनुदानों को स्वीकृति आवश्यक है। श्रीभंडारम् के पर्यवेक्षकों को अनुदत्त भूमि से उत्पत्तियों को इकट्टा करना है। उक्त समय तक अर्थात् सन् 13वीं सदी के द्वितीय तिमाही (तीन महीनों का समय) में तिरुचानूर स्थानत्तार और तिरुमल वेंकटेश्वर मंदिर के श्री भंडारम् दोनों अलग हो गये हैं और दोनों का निरीक्षण अलग अलग अधिकारी समूहों से होने लगा। वैसे श्री गोविंदपेरुमाल मंदिर के लिए अतिरिक्त कार्यालयी व्यवस्था न होने के कारण उससे संबन्धित कार्यवाही तिरुचानूर की संस्था से ही चलती रही। लेकिन पूर्व अभिलेखों में यह स्पष्टतः विदित नहीं किया गया है कि श्री गोविन्दराज स्वामी का मंदिर कब संपन्न हुआ और मूर्ति की प्रतिष्ठा कब की गयी। सर्वसाधारण का विश्वास है कि श्री गोविंदराज स्वामी का मंदिर निर्माण और मूर्ति की प्रतिष्ठा आचार्य रामानुज द्वारा संपन्न हुआ था (समय सन् 1017 - 1137)। (वे 120 वर्ष जीवित रहे उस समय तक)। एक और मत भी मिलता है। उसके अनुसार ई. की ग्यारहवीं या बारहवीं शती में कुलोत्तुंग चोल के मरणोपरांत (सन् 1120 में) एक चोल राजा के द्वारा श्री गोविंदराजस्वामी की मूर्ति को चिदंबरम् के पास समुद्र में फेंकवाया गया था। उस राजा के डर से, आचार्य रामानुज श्रीरंगम से भागकर मैसूर के पास स्थित मेलकोटै में आत्मरक्षा के लिए पहुँच गये। चिंदबरम् से गोविंदराज स्वामी की मूर्ति को ढूँढकर रामानुज साथ ले गये। परन्तु वह मूर्ति बहुत छोटी थी, लगभग दो फुट की

थी। इसीलिए स्वामी की आज की मूर्ति को पुनः तैयार करानी पडी। आज की गोविंदराज स्वामी की मूर्ति 5 से 6 फुट की है। मूर्ति एक ओर मुडी लंबी शयन मूर्ति है। उस मूर्ति के अनुरूप शारीरिक नापों को संतुलित भी रखा गया है। इतना ही नहीं, भगवान के साथ लक्ष्मी, ब्रह्म तथा कुछ ऋषि समुदाय भी हैं।

संख्या 40 और 41 में तिरुचानूर के तिरुविलंकोइल का उल्लेख है। परन्तु उसके निर्माण और उसमें मूर्ति की प्रतिष्ठा के संबन्ध में कुछ भी उल्लेख नहीं है। यह भी उल्लिखित नहीं है कि किसके द्वारा कार्य संपन्न हुआ है। (संख्या 43, 118, 119, 120 (129), 137, 144 सें भी यह स्पष्ट नहीं है)। शायद उसका संबन्ध अलगिय-पेरुमाल (संख्या 34) की स्थापना से हो। एक खंडित अभिलेख संख्या 42 में उल्लिखित है कि श्री वेंकटेश्वर भगवान को एक नायक (शायद सेनाधिकारी हो सकता है) से भू अनुदान दिया गया है। यह भूदान तेलुगु चोल राजा मधुरांतक पोट्टपि चोल के पाँचवे राज्य शासन वर्ष में किया गया है। मधुरांतक पोट्टपि चोल अल्लुन तिरुक्कालत्तिदेव नेल्लूरु के राजा थे। उनका राज्य विस्तार उस समय काँची तक था। उनका पाँचवा राज्य वर्ष सन् 1255 ई. था।

संख्या 43 के अनुसार स्थानत्तार द्वारा एक भूखण्ड के संदर्भ में प्रस्तुत किये गये आवेदन पत्र (अर्जी) से संबन्धित है। वह भूमि तोंडपाडिप्परु और कुडवूर्नाडु और वारियविमानट्टान (अरगप्परु का) के निवासियों द्वारा भूदान में दिया गया क्षेत्र है। इसको वीरनरसिंह देव यादवराय ने पृष्ठांकित किया है और नायनार जटावर्मन सुंदर पाण्ड्य - I (सन् 1251 - 1275 ई.) ने अनुमोदित भी किया था। यह उनके ''तिरुमुखम्'' में है। यादवराय ने इसे अपने ''ओलै'' (राजाज्ञा पत्र) द्वारा संप्रेषित किया है स्थानत्तार को। यह पांड्य राजा के राज्यकाल के तृतीय वर्ष (सन् 1254 ई.) से तिरुवेंकटमुडैयान मंदिर के सेवार्थ लागू हुआ है। इस भूमि को तिरुविलनकोइल के द्वारा निर्धारित और मापों के लिए उपयोग में लायी जानेवाली रस्सी अथवा लकडी से नापी गयी।

संख्या 44 वीर नरसिंहदेव यादवराय के द्वारा दिये गये निर्देश की सूचना देता है। इसके अनुसार उक्त आदेश सुंदर पांड्य (सन् 1263 ई) से कार्यान्वित हुआ है। इसमें पादिरिवेडु गाँव की दान विषयक सूचना है। यह दान तिरुवेंकटमुडैयान के दैनिक प्रसाद समर्पण निमित्त है जो गाँव की आमदनी से संपन्न हो सकता है।

संख्या 45 और 46 में जटावर्मन सुंदर पाण्ड्य I की प्रशस्ति का गान है (प्रधानतः प्रशंसा, प्रशस्ति, युद्ध विजय आदि)। ये चंद्रवंशी राजाभरण हैं, ये महादेव है, मधुरापति हैं, केरल राजवंशों के विनाशकर्ता हैं, दूसरे राम हैं, लंका विध्वंसक राम सम हैं, पर्वतों के लिए बिजली (वज्र) सम हैं, गज समूह के लिए सिंह सम हैं, काडव और पल्लवों के विनाश्क हैं, अनेक शत्रुओं के किलों के नाशक हैं, शत्रु वनों के लिए दावाग्नि सम हैं, कांची नगर के अधिपति हैं, शत्रु हिरणों के लिए बाघ सम हैं, (काकतीय) गणपति हैं, सामंत राजाओं के स्थापक हैं, महाराजाधिराज परमेश्वर हैं, त्रिलोक पति हैं, वीर गंडगोपाल को स्वर्ग में स्थापित करनेवाले हैं, राजसमुदाय के परिशुद्धक हैं आदि आदि। (ये प्रशस्ति गान के कुछ अंश हैं।)

संख्या 45 के विवरण के अंत में राजा के राज्य अधिकार वर्ष* 14 (सन् 1266 ई) की एक और सूचना भी है। इसमें पूर्व अनुदान के

रूप में दिये दो गाँवों का उल्लेख भी है जो कावेरी नदी के दक्षिणी तट पर थे।

[[*व्यतिरेकी वर्ष (opposite year) एदिर - आण्डु, राजाओं के शासन में राज्य के खोने और राज्याधिकार) खोने का उल्लेख है। उससे पहले और बाद में राज्याधिकार प्राप्त करने का वही वर्ष है। यह एक आश्चर्य की बात है कि राजा जटावर्मन सुन्दर पाण्ड्य - I जैसे वीर सम्राट ने, जिन्होंने पहले केरल राज्य को; अर्थात् ट्रावेन्कूर, चोल साम्राज्य का कावेरी परिसर; और पल्लव राज्य का प्रान्त काँची से नेल्लूर तक अधीन में रखकर चौदह वर्ष पर्यन्त राज्य किया था, स्वयं हारकर अपना राज्य खो दिया। यह उनके राज्य शासन वर्ष 14 और वर्ष 15 के बीच घटित हुआ था। इसी को व्यतिरेकी वर्ष कहा गया है। उनको पराजित करनेवाले राजाओं में कोई भी उन समान वीर और पराक्रमी नहीं था। हो सकता है कि यह उनके सह-शासक नहीं था। हो सकता है कि यह उनके सह-शासक (Co-ruler) विक्रम पाण्ड्य के हाथों ही घटित हुआ होगा। चाहे जो भी हो राजा ने पुनः राज्य सिंहासन ग्रहण किया और राज्य की स्थापना व्यतिरेकी वर्ष में पुनः की। यह उनके राज्य का 15वाँ वर्ष था, अर्थात् सन् 1266]]

संख्या 47 से संख्या 56 तक सब खंडित हैं। उनमें सुन्दर पाण्ड्य की प्रशस्ति के कुछ अंश और अंग हैं।

संख्या 49 के अनुसार सुंदर पाण्ड्यदेव ने श्री वेंकटेश्वर स्वामी के मंदिर के लिए एक हेम-कलश प्रदान किया।

(यह स्वर्ण कलश भगवान के वास के ऊपर स्थित विमान का कलश है।)

संख्या 50 और संख्या 52 में राजा के अभिषिक्त होने का उल्लेख है। यह उनका वीराभिषेक है। यह काँची में संपन्न हुआ। संख्या 51 में तो उनका वहाँ के अभिषेक की ही सूचना है।

संख्या 57 में कपिलतीर्थम् में मंदिर निर्माण की बात है। तिरुमल पर्वत शिखरों की तल भूमि में कपिलतीर्थम् है। इस तल प्रांत में नम्माल्वार का वानेडुङ्कैयलगियार बनाम पल्लवरायर ने लगभग 13वीं शताब्दी के अंत में यह निर्माण करवाया है। संख्या 58 के अनुसार नम्माल्वार की मूर्ति को मुनि बताया गया। वे तातायगुंटा (तातैय तालाब) के पास रहनेवाले थे। उन्होंने दिव्य ज्ञान को प्राप्त किया था। ब्रह्मविद्या प्राप्त की थी। संख्या 165 तो इनको पेरुमक्कल (गौरवनीय महात्मा) कहकर श्रीवैष्णवों में एक श्रेष्ठ व्यक्ति घोषित करता है और सूचित करता है कि वे तिरुमल पर्वत के पाद क्षेत्र प्रांत में रहते थे।

संख्या 59 द्वारा हमें ज्ञात होता है कि 33 गायें, एक साँड और शाश्वत तौर पर दीप जलाकर रखने के लिए उपयुक्त दीपस्तंभ के अनुदान संपन्न हुए हैं। यह तिरुवेंकटमुडैयान के मंदिर में गायों के दूध से मिलनेवाले घी से दीप प्रज्जवलन के लिए प्रदत्त अनुदान है। यह नया अनुदान क्रम उससे पूर्व चलनेवाली पद्धति के स्थान पर है। उस पद्धति में 30 या 40 कळंजु सोना दीप ज्वलन के लिए जमा किया जाता रहा है। उपर्युक्त भेंट अन्नन पेरुमालप्रियन द्वारा उनके राज्याभिषेक के नौवें वर्ष में प्रदान की गयी। यह समय सन् 1250 ई - 1285 ई का है। उस समय तेलुगु पल्लव राजा विजयगंडगोपालदेव राज कर रहे थे। यह गोदान भगवान के लिए अत्यंत उपयोगी था। गायों से प्राप्त दूध से अन्नप्रसाद समर्पण में अच्छा सहयोग मिलने लगा।

संख्या 61 श्री गोविंदराज स्वामी के तिरुमोलि-पडि समर्पण के लिए सहयोगी दानों का उल्लेख है। यह समर्पण नित्य पूजा समर्पण है। प्रधानतः तिरुमोलि पाठ के संदर्भ में होता है।

इसके अतिरिक्त वैकाशी मास के अन्नप्रसाद के लिए भी इसका उपयोग होता है। ये दो समयों में आते हैं -

(1) विशाख के महीने में (मई - जून) श्री वेंकटेश्वर भगवान के दैनिक नैवेद्यों के लिए और (2) चित्तिरै उत्सव (अप्रैल - मई) के लिए तिरुमल पर। यह विजयगंड गोपाल के शासन वर्ष 4 में संपन्न हुआ (सन् 1264 या 1274 या 1284 ई.)।

[[हमें श्री गोविंदराज स्वामी के मंदिर का निर्माण संबन्धी समाचार ठीक नहीं मिलता है - यानी स्वामी का मंदिर कब निर्मित हुआ, किससे निर्मित करवाया गया था, किसने मूर्ति की स्थापना की आदि आदि। इतनी मात्र सूचना है कि श्री रामानुज के जीवन काल में, 11वीं और 12वीं सदी के बीच या उनके देहावसान समय (सन् 1137 ई) में यह काम संपन्न हुआ है। यह भी चालुक्य चोल राजा कुलोत्तुंग - I की मृत्यु समय के बाद ही है। पता चला है कि कुलोत्तुंग चोल की मृत्यु सन् 1120 ई. में हुई। कुलोत्तुंग चोल ने उत्सवमूर्ति को ही चिदंबरम् के पास समुद्र में फेंकवाया था। उनके डर से श्री रामानुज ने मैसूर के मेलकोटै में जाकर अपने प्राणों को बचाया (दे.पृ. 145 और 146)। इसी तरह श्री गोविंदराज स्वामी के वैकाशी उत्सवों का आरंभ किसने किया है, इसका भी कोई समाचार प्राप्त नहीं होता है। गोविंदराज स्वामी से संबन्धित प्राचीनतम उल्लेख संख्या 40 में ही मिलता है। यह राजराज चोल III का समय था, अर्थात् सन् 1235 ई. का समय था। उसमें भी श्री गोविंदराज स्वामी के मंदिर में तिरुमंगैयाल्वार की मूर्ति के संबन्ध में मात्र उल्लेख है। पेरिय नाट्टवर के द्वारा उस मूर्ति के लिए अन्नप्रसाद आदि के लिए भूदान का उल्लेख है। इस सब के आधार पर इतना सोचा जा सकता है कि गोविंदराज स्वामी का मंदिर निर्माण और मूर्ति की स्थापना सन् 1235 ई. से पहले 13वीं शताब्दि में हुआ होगा। अर्थात् गोविंदराज स्वामी का मंदिर निर्माण और मूर्ति स्थापन तिरुमंगैयाल्वार की मूर्ति स्थापना से पहले कम से कम 4 या 5 साल पहले हुआ होगा। संक्षेप में कहें तो लग भग सन् 1230 ई. में हो सकता है। संख्या 61, जिसमें वैकाशी उत्सव का उल्लेख है, का समय विजय - गंडगोपाल के राज्य काल का 14वाँ, 24वाँ अथवा 34वाँ वर्ष

हो सकता है (3 या 4 अक्षरों के 4 के सामने मिट जाने के कारण)। शायद 14वाँ या 24वाँ वर्ष ही होगा। यह सन् 1264 या 1274 ई. है। संख्या 86 से हमें ज्ञात होता है कि राजा वीरनरसिंह देव यादवराय की रानी ने राजा के राज्यकाल के तीसवें वर्ष में (सन् 1235 ई. में) श्री गोविंदराज स्वामी के उत्सव के लिए व्यवस्था की। यह उत्सव आणिमास (जुलाई) में संपन्न किया जाता है। यह उत्सव और वैकाशी (जून) का उत्सव दोनों विजयनगर राज्य के शासन काल तक संपन्न होते रहे हैं। इस के बाद ईस्ट इंडिया कंपनी का शासन आरंभ होता है। इस शासन के दो या तीन दशाब्दियों के अंदर ही आणिमास उत्सव को समाप्त किया गया। वैकाशी उत्सव ही चलता रहा जो आजकल भी चालू है। इस संदर्भ में जो दारु रथोत्सव का प्रावधान भी था एक दशक के बाद रुक गया। रथोत्सव के बिना उत्सव चलने लगा। एक नया रथ सन् 1972 में निर्मित होकर उत्सव व्यवस्था से जुड गया। उत्सवों के आठवें दिन को रथ पर आरूढ़ हो भगवान गोविंदराज स्वामी भक्तों को अपना दिव्य दर्शन देते हैं।

क्रमशः

आज श्रावण मास की पूर्णिमा का पवित्र दिन है। लोग विधिपूर्वक रक्षाबंधन का आचरण कर रहे हैं। चारों ओर त्यौहार मनाने का उत्साह और उमंग उमड पड़ रहा है। जहाँ भी देखो दुकानों में रंग-बिरंगे सुंदर धागोंवाली राखियों, फलों और मिठाइयों और केसरिया रंग के अन्य उपहारों से सुंदर दिखाई दे रहा हैं। रक्षाबंधन के आचरण के लिए पहले ही सब तैयारियाँ पूरी हो चुकी हैं। घरों को साफ सुथरा किया गया है। घर वालों ने सुबह होते ही स्नानादिक कर्म पूरा करके शुभ्र वस्त्र पहनकर भक्तिपूर्वक भगवान की पूजा की है। पूजा के बाद बहिनों ने एक थाली में प्रसाद को, रोली को, कुंकुम को, मिठाइयों को और राखी को रखा है। भाई को पूर्वी दिशा की ओर बिठाके उसके माथे पर कुंकुम लगाके प्रसाद देती है और उसकी आरती उतारती है। इस के बाद मिठाई खिलाकर उसके कल्याण की कामना करते हुए उसकी कलाई पर राखी बांधती है। भाई भी अपनी बहन की रक्षा का वचन देते हुए प्यार से कुछ उपहार देता है। इस दिन को हर घर में तरह-तरह के पकवान बनाए जाते हैं। भाई बहन के बीच का यह संबंध अनन्य है। रक्षाबंधन के विशेष अवसर पर इस त्योहार के बारे में जानने का प्रयास करेंगे।

रक्षाबंधन को पूरे भारत में तथा नेपाल में आडंबरतापूर्वक मनाते हैं। इस त्यौहार को श्रावण मास की पूर्णिमा के पवित्र दिन पर आचरण किया जाता है। रक्षाबंधन में रक्षा का अर्थ होता है 'सुरक्षा' और 'बंधन' का अर्थ होता है 'बांधना'। केवल सगे भाई-बहन के अलावा जिनको हम भाई या बहन समान प्यार करते हैं, उनको भी रक्षा बांधी जाती हैं। सामाजिक तौर पर किसी नेता या प्रख्यात व्यक्ति को बच्चों या महिलाओं से राखी बांधी जाती है। प्राचीन काल में गुरुकुल में शिष्य को शिक्षा पूर्ण होने के पश्चात आशीर्वाद देते हुए गुरु द्वारा राखी बांधी जाती थी।

रक्षाबंधन के विविध नाम

रक्षाबंधन को देश के विभिन्न राज्यों में अलग-अलग तरीकों से आयोजित करते है। रक्षाबंधन को

राखी पूर्णिमा, भाई बहन दिवस, कजरी पूर्णिमा, महाराष्ट्र में नारियल पूर्णिमा, तमिलनाडु में अवनि अवित्तम, गुजरात में पवित्रोपना, राजस्थान में राम राखी और उत्तरांचल में श्रावणी आदि नामों से जाना जाता है। इस पर्व के आचरण में विभिन्न क्षेत्रों के अनुसार थोड़ा अंतर होता है। नाम जो भी हो मूल रूप में प्यार और कर्तव्य इस पर्व का मूल उद्देश्य है। इस श्रावण पूर्णिमा के दिन ब्राह्मण पुराने यज्ञोपवित का विसर्जन करके नए यज्ञोपवित का धारण करते हैं।

रक्षाबंधन को अत्यंत प्राचीन काल से मनाया जा रहा है। रक्षाबंधन से संबंधित कहानियाँ और उसके महत्व के बारे में विविध पुराणों में तथा महाभारत में चित्रित है। रक्षाबंधन की वो कहानियाँ इस प्रकार है-

इंद्र-शचि की कहानी

भविष्य पुराण में यह कथा अंकित है। एक बार देव और दानवों के बीच भयंकर युद्ध छिड़ गयी। देवताओं को दानवों का तीव्र प्रतिरोध का सामना करना पड़ा। युद्ध बहुत समय तक चलता रहा। दानवों का जीत निश्चित होने लगा। इस विषय परिस्थिति को देखकर इंद्र की पत्नी शची ने श्रावण पूर्णिमा के दिन युद्ध में इन्द्र के विजय का संकल्प लेते हुए निष्ठा से पूजा करके मंत्रयुक्त धागे को इंद्र की कलाई पर बांधा। इस शक्तिशाली धागे के प्रभाव से इंद्र ने दानओं को हराया। इस कहानी से पता चलता है कि रक्षा (पवित्र धागा) को केवल भाई बहनों के बीच तक सीमित न होकर पत्नी भी पति को बांधती थी। रक्षा (धागा) संकल्प शक्ति और विजय का प्रतीक है।

राजा बलि की कहानी

भागवत पुराण और विष्णु पुराण में राजा बलि की कहानी मिलती है। एक समय ऐसा था कि शक्तिशाली राजा बलि के कारण दानव बहुत प्रबल हो चुके थे। राजा बलि अपनी शक्ति से तीनों लोकों को अपना आधीन कर लिया; इंद्र से स्वर्ग लोक भी छीन लिया। देवताओं की स्थिति बहुत दयनीय थी। उन्होंने दीनबंधु विष्णु के सामने जाकर अपनी दीनस्थिति को बताते हुए रक्षा करने की प्रार्थना की। देवताओं की रक्षा के लिए और बलि के अहंकार को तोड़ने के लिए भगवान विष्णु ने अदिति के गर्भ से वामन रूप में (एक बौने ब्राह्मण) अवतार लिया। एक दिन राजा बलि यज्ञ कर रहा थे, तब वामन राजा बलि के पास जाकर दान में तीन पग भूमि मांगी। गुरु शुक्राचार्य मना करने पर भी महादानी बलि ने वामन की मांग को पूरा करना अपना कर्तव्य माना। तब वामन ने इतना विशाल रूप धारण किया कि दो पग़ में भूमि और आकाश को नाप लिया। तीसरे पग को बलि के कहने पर उसके सिर पर रखा और उसे पाताल लोक में भेज दिया तथा देवताओं को स्वर्ग लौटा दिया। राजा बलि का अहंकार टूट गया। राजा बलि भी पाताल में जाकर भगवान विष्णु को अपने साथ रहने का आग्रह किया, जिसको श्रीहरि ठुकरा न पाए। यहाँ वैकुंठ लोक में

सितंबर 2025

04 श्री वामन जयंती
04-07 तिरुचानूर श्री पद्मावतीदेवी का पवित्रोत्सव
06 श्री अनंतपद्मनाभव्रत
08 महालय पक्ष प्रारंभ
22 देवीनवरात्रि उत्सव आरंभ
24 से अक्तूबर 02 तक तिरुमल श्री वेंकटेश्वरस्वामी का ब्रह्मोत्सव
24 से अक्तूबर 02 तक तिरुचानूर श्री पद्मावतीदेवी का नवरात्रि उत्सव
28 तिरुमल श्री बालाजी का गरुडसेवा
29 सरस्वतीपूजा
30 दुर्गाष्टमी

श्रीहरि के बिना लक्ष्मी देवी बहुत चिंतित थी। इसलिए माता लक्ष्मी देवी महाराजा बलि के पास एक वृद्ध नारी के रूप में गयीं। श्रावण पूर्णिमा के दिन माता लक्ष्मी ने बलि को अपना भाई मानते हुए उसकी कलाई पर राखी बांधी और उनसे अनुरोध किया कि वह भगवान विष्णु को वापस वैकुंठ भेज दे। महाराजा बलि भी उसकी मांग को पूरा करते हुए विष्णु जी को सम्मनपूर्वक वैकुंठ भेज दिया। इस कहानी से संबंधित एक श्लोक है। इस श्लोक को राखी बांधते समय बोला जाता है-

"येन बद्धो बलिराजा दानवेन्द्रो महाबलः।

तेन त्वामपि बध्नामि रक्षे मा चल मा चल॥"

इसका भावार्थ है - 'जिस पवित्र धागे से महान शक्तिशाली दानवेन्द्र राजा बलि को बाँधा गया था, उसी सूत्र (रक्षा) को मैं तुझे बाँधता हूँ। हे रक्षे! (पवित्र धागा) तुम स्थिर रहना।'

यह मंत्र पवित्र धागे का महत्व को दिखता है जो भाई-बहन के बंधन का प्रतीक है। धागे की शक्ति से हमारी रक्षा हमेशा होती है।

महाभारत में रक्षाबंधन की कथा

महाभारत में रक्षाबंधन के महत्व के बारे में एक वृत्तांत मिलता हैं। हमेशा श्रीकृष्ण को अपशब्द बोलनेवाले शिशुपाल से कुपित होकर श्रीकृष्ण ने सुदर्शन चक्र से उसका वध किया था। वध करने के बाद जब सुदर्शन चक्र वापस उनके पास आ रहा था तब श्रीकृष्ण के उंगली को चोट लगी थी।

इस घटना से विचलित द्रौपदी ने अपनी साड़ी के पल्लू का कुछ भाग फाड़कर कृष्ण की उँगली पर बांध था। श्रीकृष्ण ने द्रौपदी को संकट के समय उसकी रक्षा करने का वादा किया। भरी सभा में कौरवों द्वारा द्रौपदी के चीरहरण के समय उसको वस्त्र देकर उसके मान की रक्षा की। कहा जाता है कि महाभारत युद्ध को पांडव जीतने में राखी का बड़ा योगदान था। पांडवों के पास कौरवों से कम संख्या में सेना थी। इससे महाभारत युद्ध के दौरान युधिष्ठिर ने भगवान कृष्ण से पूछा कि "मैं कैसे इस संकट से पार कर सकता हूँ?" कृष्ण ने उन्हें तथा उनकी सेना को परस्पर रक्षा की धागे को बांधने को कहा। माना जाता है कि यह घटना भी श्रावण महीने की पूर्णिमा तिथि पर ही घटित हुई। इस पवित्र धागे की शक्ति से वे सब संकटों से पार हो गए और बाद में युद्ध को भी जीते।

अंततः कह सकते हैं कि रक्षाबंधन लोगों के बीच संबंधों को मज़बूत करने के अलावा सुरक्षा के भाव को जागृत करनेवाला त्योहार है। यह पवित्रसूत्र एकता, भद्रता और मानवता का प्रतीक है। यह त्यौहार पारिवारिक और सामाजिक एकसूत्रता का सांस्कृतिक रूप है।

जून-2025 महीने का क्विज-35 के समाधान

1) श्री गोविंदराजस्वामी, 2) शयन भंगिमा,

3) त्रिदिवसीय, 4) पद्मावती देवी,

5) घोडे, 6) वेदान्तदेशिक,

7) अनंताल्वान, 8) घुटनों पर चढ़ाई कर,

9) श्री प्रसन्न वेंकटेश्वरस्वामी, 10) वेद विमान,

11) मलर मंगै नाच्चियार, शिसदेवी,

12) उय्यवन्द पेरुमाल,

13) जगन्नाथ, बलभद्र और सुभद्रा,

14) हनुमान, 15) Fragaria Ananassa.

भगवान हयग्रीव

- डॉ.जी.शेक षावली

हयग्रीव महत्व

यह हयग्रीव अवतार ज्ञान और शिक्षा का प्रतीक माना जाता है। इसके बल पर आप कार्य में सफलता प्राप्त कर सकते हैं और अपने दुश्मनों पर विजय हासिल कर सकते हैं। सावन पूर्णिमा पर माता लक्ष्मी, प्रसन्न होकर धन से भरेगी, तिजोरी मिलेगी, विष्णु भगवान की कृपा होगी, चंद्र दोष दूर होगा।

उद्देश्य

इस अवतार का उद्देश्य राक्षसों से चुराए गए वेदों को पुनःप्राप्त करना था।

हयग्रीव ध्यान मंत्र

ज्ञानानन्दमयं देवं निर्मलं स्फटिकाकृतिम्।

आधारं सर्वविद्यानां हयग्रीवमुपास्महे।।

हयग्रीव जयंती की पूजा विधि

हयग्रीव जयंती के दिन सुबह ब्रह्म मुहूर्त में उठकर मंगल स्नान कर और स्वच्छ वस्त्र पहनें। पूजा के लिए एक शांत और पवित्र स्थान चुनें। वहाँ भगवान हयग्रीव की प्रतिमा या चित्र स्थापित करें। भगवान हयग्रीव की पूजा के लिए दीप जलाए और उन्हें फूल चढ़ाए। पूजा शुरू करने से पहले भगवान हयग्रीव से संकल्प लें और अपनी भक्ति और श्रद्धा व्यक्त करें। भगवान हयग्रीव की आरती करें और उनके मंत्र का जप करें। विशेष रूप से, "ॐ हयग्रीवाय नमः" मंत्र का जप करें। पूजा के बाद भगवान को फल, मिठाई या विशेष प्रसाद अर्पित करें और परिवार के सभी सदस्यों के साथ प्रसाद का वितरण करें। हयग्रीव जयंती के दिन हयग्रीव की कथा सुनना भी महत्वपूर्ण है।

हयग्रीव का उद्भव

पौराणिक कथाओं के अनुसार, एक बार भगवान विष्णु माता लक्ष्मी को देखकर हँसने लगे। माता लक्ष्मी को लगा कि भगवान श्रीहरि उनके सौंदर्य का उपहास कर रहे हैं। देवी लक्ष्मी अत्यंत क्रोधित हो गईं और उन्होंने भगवान विष्णु को शाप दिया कि आपका सिर धड़ से अलग हो जाए। उनके शाप के कारण भगवान विष्णु का सिर धड़ से नीचे गिर पड़ा। तब ब्रह्म देव के सुझाव पर देवशिल्पी विश्वकर्मा ने भगवान विष्णु के धड़ पर घोड़े का मुख

लगाया। इस तरह से भगवान विष्णु के हयग्रीव स्वरूप की उत्पत्ति हुई। भगवान हयग्रीव का सिर घोड़े का और धड़ मनुष्य का है।

वेदों की रक्षा

एक हयग्रीव नामक राक्षस ने आदिशक्ति को प्रसन्न करके वरदान प्राप्त कर लिया था कि उसकी मृत्यु हयग्रीव के हाथों में हो। वह समझ रहा था कि वह अमर हो गया

क्योंकि उसके सिवास कोई दूसरा हयग्रीव नहीं है। वरदान के बाद वह देव, मुनि, ऋषियों को सताने लगा। ब्रह्म देव से वेदों को चुरा लिया, जिससे धर्म कार्य जैसे पूजा, हवन, यज्ञ आदि बंद हो गए। भगवान विष्णु देव ने हयग्रीव अवतार को उठाकर, असुर हयग्रीव का वध कर दिया और वेदों को उससे मुक्त कर ब्रह्मदेव को सौंप दिया।

हयग्रीव जयंती की कथा

''भगवद्गीता के अनुसार जब भी भूलोक में दुष्टों के अत्याचार बढ़ जाते हैं तब भगवान शिष्ट जनों की रक्षा के लिए किसी न किसी अवतार में अवश्य आजाते हैं दुष्ट जनों का संहार कर शिष्ट जनों की रक्षा करते हैं।'' एक समय की बात है। हयग्रीव नाम का एक परम पराक्रमी दैत्य(राक्षस) हुआ। उसने सरस्वती नदी के तट पर जाकर भगवती महामाया की प्रसन्नता के लिए बड़ी कठोर तपस्या की। वह बहुत दिनों तक बिना कुछ खाए और पीये भगवती के मायाबीज एकाक्षर महामंत्र का जाप करता रहा। उसकी इंद्रिय उसके वश में हो चुकी थीं। सभी भोगों का उसने त्याग कर दिया था। उसकी कठिन तपस्या से प्रसन्न होकर भगवती ने उसे तामसी शक्ति के रूप में दर्शन दिया। भगवती महामाया ने उससे कहा, ''महाभाग! तुम्हारी तपस्या सफल हुई। मैं तुम पर परम प्रसन्न हूँ। तुम्हारी जो भी इच्छा हो मैं उसे पूर्ण करने के लिए तैयार हूँ। वत्स! वर मांगो।''

भगवती की दया और प्रेम से ओत-प्रोत वाणी सुनकर हयग्रीव की प्रसन्नता का ठिकाना न रहा। उसके नेत्र आनंद के अश्रुओं से भर गए। उसने भगवती की स्तुति करते हुए कहा, ''कल्याणमयी देवी! आपको मेरा सविनम्र नमस्कार। आप महामाया हैं। सृष्टि, स्थिति और संहार करना आपका स्वाभाविक गुण है। आपकी कृपा से कुछ भी असंभव नहीं है। यदि आप मुझ पर प्रसन्न हैं तो मुझे अमर होने का वरदान देने की कृपा करें।''

देवी ने कहा, ''दैत्य राज! संसार में जिसका जन्म होता है, उसकी मृत्यु निश्चित है। प्रकृति के इस विधान से कोई नहीं बच सकता। किसी का सदा के लिए अमर होना असंभव है। अमर देवताओं को भी पुण्य समाप्त होने पर मृत्यु लोक में जाना पड़ता है। अतः तुम अमरत्व के अतिरिक्त कोई और वर मांगो।''

हयग्रीव बोला, ''अच्छा तो हयग्रीव के हाथों ही मेरी मृत्यु हो। दूसरे मुझे न मार सकें। मेरे मन की यही अभिलाषा है। आप उसे पूर्ण करने की कृपा करें।'' तथास्तु! 'ऐसा ही हो'। यह कह कर भगवती अंतर्ध्यान हो गईं। हयग्रीव असीम आनंद का अनुभव करते हुए अपने घर चला गया। वह दुष्ट, देवी के वर के प्रभाव से अजेय हो गया। त्रिलोकी में कोई भी ऐसा नहीं था, जो उस दुष्ट को मार सके। ''विनाशकाले वीपरीत बुद्धि'' के अनुसार ''जब स्वयं का विनाश काल आते है तब बुद्धि अपने आप भ्रष्ट हो जाती हैं।'' उसने ब्रह्माजी से वेदों को छीन लिया और देवताओं तथा मुनियों को सताने लगा। यज्ञादि कर्म बंद हो गए और सृष्टि की व्यवस्था बिगड़ने लगी। ब्रह्मादि देवता भगवान विष्णु के पास गए, किन्तु वे योगनिद्रा में निमग्न थे। उनके धनुष की डोरी चढ़ी हुई थी। ब्रह्माजी ने उनको जगाने के लिए वम्री नामक एक कीड़ा उत्पन्न किया। ब्रह्माजी की प्रेरणा से उसने धनुष की प्रत्यंचा काट दी। उस समय बड़ा भयंकर शब्द हुआ और भगवान विष्णु का मस्तक कटकर अदृश्य हो गया। सिर रहित भगवान के धड़ को देखकर देवताओं के दुख की सीमा न रही। सभी लोगों ने इस विचित्र घटना को देखकर भगवती की स्तुति की। भगवती प्रकट हुई। उन्होंने कहा, ''देवताओं! चिंता मत करो। मेरी कृपा से तुम्हारा मंगल ही होगा। ब्रह्माजी एक घोड़े का मस्तक काटकर भगवान के धड़ से जोड़ दें। इससे भगवान का हयग्रीवावतार होगा। वे उसी रूप में दुष्ट हयग्रीव दैत्य का वध किया।'' तदनंतर हयग्रीव भगवान ने राक्षस संहार किया।

निष्कर्ष

हयग्रीव जयंती विशेष रूप से उन लोगों के लिए महत्वपूर्ण है जो शिक्षा और ज्ञान में उन्नति की कामना करते हैं, क्योंकि यह दिन भगवान हयग्रीव की कृपा प्राप्त करने का श्रेष्ठ अवसर माना जाता है।

गायत्री जपम्

- श्री अवधेश कुमार शर्मा

प्रस्तावना

भारतीय सनातन परंपरा में गायत्री मंत्र को सर्वोच्च स्थान है। इसे वेदमाता कहा गया है, जो समस्त वेदों की जननी के रूप में प्रतिष्ठित है। गायत्री मंत्र न केवल एक स्तोत्र है, अपितु यह चेतना की जागृति, बुद्धि की प्रखरता, आत्मिक शुद्धि तथा सर्वांगीण विकास का महान साधन है। गायत्री जप को त्रिकाल संध्या के समय करने की परंपरा वैदिक काल से चली आ रही है। इसका उल्लेख ऋग्वेद, यजुर्वेद, अथर्ववेद, ब्राह्मण ग्रंथ, स्मृति ग्रंथों, उपनिषदों, पुराणों एवं आचार ग्रंथों में प्राप्त होता है। यह लेख गायत्री जप की महिमा, विधि, लाभ तथा शास्त्रीय प्रमाणों पर आधारित है।

गायत्री मंत्र का मूल पाठ

ॐ भूर्भुवः स्वः तत्सवितुर्वरेण्यं।
भर्गो देवस्य धीमहि धियो यो नः प्रचोदयात्।।

भावार्थ - हे त्रिलोकों के परम तेजस्वी, जीवनदाता सविता देव! हम आपके दिव्य ज्योतिर्मय स्वरूप का ध्यान करते हैं। वह तेज हमारे बुद्धि-तत्त्व को सदैव प्रेरणा प्रदान करे।

शास्त्रीय सन्दर्भ

1. वेदों में उल्लेख - ऋग्वेद (3.62.10) में यह मंत्र वर्णित है और सबसे अधिक श्रद्धापूर्वक पाठित मंत्रों में से है। यजुर्वेद (36.3) एवं अथर्ववेद (14.1.64) में भी इसके जप की प्रशंसा की गई है। शतपथ ब्राह्मण तथा तैत्तिरीय ब्राह्मण में गायत्री को प्राण, चेतना तथा बुद्धि का मूल कहा गया है।

2. उपनिषदों में गायत्री - छान्दोग्य उपनिषद् (3.12) में कहा गया है कि ''गायत्री सर्वभूतों की माता है।''; बृहदारण्यक उपनिषद् (5.14.4)

में इसका उल्लेख आत्मसाक्षात्कार के साधन के रूप में किया गया है।

3. स्मृति ग्रन्थों में निर्देश - मनुस्मृति (2.77) में कहा गया है -- ''सन्ध्यां उपासीत नित्यं गायत्र्याऽभ्यंतरं जपेत्।'' (सन्ध्याकाल में नित्य गायत्री का जप करना चाहिए।); याज्ञवल्क्य स्मृति (1.23) -- ''गायत्री चापि सन्ध्यायाम्'' (संध्या के समय गायत्री का जप अवश्य करें।)

4. पुराणों में महिमा - भागवत पुराण (6.8.29) में कहा गया है कि गायत्री मंत्र की साधना करने वाला पुरुष जीवन में किसी भय से नहीं डरता। स्कन्दपुराण, गरुडपुराण, नारदपुराण में भी इसके लाभ एवं विधि का विस्तार से वर्णन है।

गायत्री जप की विधि

1. संकल्पपूर्वक जप - शांत मन, शुद्ध स्थान और पवित्र भावना से संकल्प लें।
2. प्रातः, मध्याह्न, सायंकाल में संध्या के साथ जप करें।
3. जप संख्या - आरंभ में 108 बार जप करना श्रेष्ठ माना गया है।
4. प्रत्येक जप के पूर्व प्राणायाम, न्यास एवं ध्यानेन गायत्री देवी का आह्वान करें।
5. जप की स्थिति - पद्मासन या सिद्धासन में बैठकर उत्तर या पूर्व की ओर मुख करके जप करें।
6. जपमाला - तुलसी, रुद्राक्ष या चंदन की 108 मनकों वाली माला से जप करें।

गायत्री जप के लाभ

1. बुद्धि की शुद्धि और तीव्रता - उपनिषदों में इसे बुद्धिप्रदाता कहा गया है - ''धियो यो नः प्रचोदयात्''।

2. आध्यात्मिक उन्नति - गायत्री जप आत्मा को उसके परम स्वरूप की ओर ले जाता है। और आत्मा परमात्मा का संबंध का माध्यम भी बताया गया है, जिसके कारण से हमारे पाप संताप सदैव के लिए नष्ट हो जाते हैं, तथा परमपिता परमात्मा के श्रीचरणों में हमारा चित्त लग जाता है।

3. संकल्प शक्ति की वृद्धि - जप से मानसिक एकाग्रता और आत्मविश्वास बढ़ता है। उसके कारण हमारे सभी कार्य शिव संकल्प युक्त पूर्ण होते हैं।

4. स्वास्थ्य लाभ - इसके उच्चारण से शरीर की नाड़ियों में साम्य तथा मानसिक संतुलन प्राप्त होता है। मस्तिष्क निर्मल एवं पवित्र होता है, कुशाग्र बुद्धि भी होती है।

5. संतान प्राप्ति एवं शांति - शास्त्रों में गायत्री को कुलसंवर्धिनी भी कहा गया है। आधुनिक वैज्ञानिक दृष्टिकोण गायत्री मंत्र के 24 अक्षरों को शरीर की 24 प्रमुख नाड़ियों से जोड़ा गया है। कुछ शोध बताते हैं कि इसके उच्चारण से ऑक्सीजन का प्रवाह, ब्रेन वेव्स की नियमितता और स्ट्रेस कम होता है। आधुनिक न्यूरोलॉजी में देखा गया है कि नियमित मंत्रोच्चारण आल्फा वेव्स को बढ़ाता है, जिससे ध्यान की गहराई बढ़ती है।

सारांश

गायत्री जप भारतीय जीवन-दर्शन का आधार है। यह केवल शब्दों का समुदाय नहीं, बल्कि दैवी शक्ति का सजीव आह्वान है। गायत्री साधना व्यक्ति को अंतर्मुखी, सज्जन, धार्मिक और ध्यानशील बनाती है। यह ब्रह्मविद्या का द्वार खोलती है और व्यक्ति को आत्मसाक्षात्कार की ओर ले जाती है।

गायत्री मंत्र को नित्य श्रद्धापूर्वक जपकर व्यक्ति न केवल अपने जीवन को उन्नत करता है, अपितु समस्त समाज के कल्याण हेतु भी ऊर्जा प्रसारित करता है। इस प्रकार, गायत्री जप एक व्यक्तिगत साधना होते हुए भी सामूहिक कल्याण का महानतम साधन है।

श्री सिद्धिविनायक(गणेश) व्रतकल्प

विनायक चतुर्थी के दिन प्रातःकाल में घर की सफाई कर आम के पत्तों को बांधकर द्वार पर लगाए। द्वारों का अलंकार करें। परिवार के सभी सदस्य शिरःस्नान करें। स्नान करने से पहले सर पर तेल लगाए। देवता गृह में, परिशुभ्र स्थान पर, एक आसीनस्थ पीठ को रखकर, विनायक की मूर्ति की स्थापना करें। पूजा सामग्री को रख ले। गणेशजी को 'मोदक' बहुत पसंद है। यदि अन्य प्रकार के खाद्य पदार्थ है तथापि इस मोदक को भी जरूर भोग लगाए। विनायक की मूर्ति के सामने पीठ पर थोडासा चावल डालें। उस पर ताम्र पात्र या रजत पात्र या मिट्टी का पात्र रखें। उस पर हल्दी का लेपन करके कुंकुम का तिलक रखे। उस पर अक्षत, फूल डालकर, उस पर आम के पत्ते रखकर उस पर नारियल रखकर कलश स्थापित करें। हल्दी से छोटे गणेश को तैयार करें। अर्चना से पहले एक गिलास में चम्मच अथवा उद्धरिणी रखें। बगल में एक छोटासा प्लेट स्थापित करें। पूजा करते समय हाथ को हल्दी, कुंकुम रोली लगता है। हाथ को साफ करने के लिए एक शुद्ध वस्त्र को रखलें।

सबसे पहले कुंकुम का तिलक ललाट पर लगाकर इस प्रकार प्रार्थना करें -

प्रार्थना

ॐ शुक्लाम्बरधरं विष्णुं शशिवर्णं चतुर्भुजम्।
प्रसन्नवदनं ध्यायेत् सर्वविघ्नोपशान्तये।।
अयं मुहूर्तः सुमुहूर्तोस्तु।।

तदेवलग्नं सुदिनं तदेव, ताराबलं चन्द्रबलं तदेव।
विद्याबलं दैवबलं तदेव, लक्ष्मीपते स्तेंघ्रि युगंस्मरामि।।

लाभस्तेषां, जयस्तेषां कुतस्तेषां पराभवः।
येषा मिन्दीवरश्यामो हृदयस्थो जनार्दनः।।

आपदामपहर्तारं दातारं सर्वसंपदाम्।
लोकाभिरामं श्रीरामं भूयोभूयो नमाम्यहम्।।

सुमुखश्चैकदन्तश्च कपिलो गजकर्णकः,
लम्बोदरश्च विकटो विघ्नराजो गणाधिपः।।

धूमकेतुर्गणाध्यक्षः फालचन्द्रो गजाननः।
वक्रतुण्डः शूर्पकर्णो, हेरंबः स्कंदपूर्वजः।

अष्टावष्टौ च नामानि यः पठेच्छृणुयादपि।
विद्यारम्भे विवाहेच प्रवेश निर्गमेतथा।।

संग्रामे सर्वकार्येषु विघ्नस्तस्य न जायते
अभीप्सितार्थ सिद्ध्यर्थं, पूजितो यस्सुरैरपि,
सर्वविघ्नच्छिदे तस्मै गणाधिपतये नमः।।

आचमन

(नमस्कार करके आचमन करे। बाये हाथ में उद्धरिणी पकड़कर जलपात्र से तीन बार जल लेकर दाये हाथ में डालते हुए ॐ केशवाय स्वाहा, ॐ नारायणाय स्वाहा, ॐ माधवाय स्वाहा कहते हुए बिना शब्द करके जल पान करें। हस्तं प्रक्षाल्य कहते हुए उद्धरिणी से पानी लेकर हाथ धोले।)

ॐ गोविंदाय नमः बोलते हुए उद्धरिणी से जल को बाये हाथ में डाल कर, किसी दूसरे पात्र में विसर्जित करें। आचमन किया हुआ जल को पूजा में किसी भी प्रकार से उपयोग न करें। हाथ जोड़कर नमस्कार करते हुए, ॐ विष्णवे नमः, ॐ मधुसूदनाय नमः, ॐ त्रिविक्रमाय नमः, ॐ वामनाय नमः, ॐ श्रीधराय नमः, ॐ हृषीकेशाय नमः, ॐ पद्मनाभाय नमः, ॐ दामोदराय नमः, ॐ संकर्षणाय नमः, ॐ वासुदेवाय नमः, ॐ प्रद्युम्नाय नमः, ॐ अनिरुद्धाय नमः, ॐ पुरुषोत्तमाय नमः, ॐ अधोक्षजाय नमः, ॐ नारसिंहाय नमः, ॐ अच्युताय नमः, ॐ जनार्दनाय नमः, ॐ उपेन्द्राय नमः, ॐ हरये नमः, ॐ श्रीकृष्णाय नमः इन मंत्रों का उच्चारण करें। बाद में - निम्न मंत्र बोलते हुए भूतो च्छाटन करें -

उत्तिष्ठन्तु भूतपिशाचाः ये ते भूमि भारकाः।
एतेषां अविरोधेन ब्रह्मकर्म समारभे।।

बोल कर सभी दिशाओं में जल फेंके।

प्राणायाम

ॐ भूर्भुवस्सुवः दैवी गायत्री छन्दः प्राणायामे विनियोगः।

(प्राणायाम करे। नासिका के बाये नथुने से श्वास लेते हुए गायत्री मंत्र का उच्चारण करें)

ॐ भूः, ॐ भुवः, ॐ सुवः, ॐ महः,
ॐ जनः तपः ॐ सत्यं, ॐ तत्सवितुर्वरेण्यम्
भर्गोदेवस्य धीमहि धियोयोनः प्रचोदयात्।
ओमापो ज्योतीरसोऽमृतं
ब्रह्म भूर्भुवस्सुवरोम्।।

(ऐसा तीन बार प्राणायाम करें)
(दीप जलाकर निम्न प्रकार से संकल्प करें)

संकल्प

ॐ ममोपात्त समस्त दुरितक्षयद्वारा श्री परमेश्वरं उद्दिश्य, श्री परमेश्वर प्रीत्यर्थं शुभेशोभने मुहूर्ते अद्य ब्रह्मणः द्वितीयपरार्थे श्वेत वराहकल्पे वैवस्वतमन्वंतरे, अष्टाविंशति तमे, कलियुगे, प्रथमपादे, जम्बूद्वीपे, भरतवर्षे, भरतखण्डे, मेरोः दक्षिण दिग्भागे, श्रीशैलस्य... प्रदेशे (श्रीशैल को जिस दिशा में नगर विद्यमान है उस दिशा का नाम लें), अस्मिन् वर्तमाने व्यावहारिक चान्द्रमानेन प्रभवादि षष्टि संवत्सराणां मध्ये श्रीविश्वावसु नामसंवत्सरे, दक्षिणायने, वर्षऋतौ भाद्रपदमासे शुक्लपक्षे चतुर्थ्यां तिथौ सौम्यवासरे युक्तायां, शुभनक्षत्रे, शुभयोगे, शुभकरणे एवंगुणविशेषण विशिष्टायां, अस्सां शुभतिथौ श्रीमान् ...... गोत्रः ...... नामधेयः, श्रीमतः....... गोत्रस्य .... नामधेयस्य (पूजा करने वाले अपना नाम, गोत्र का उच्चारण करें पूजा में उपस्थित बच्चों के नामों का उच्चारण भी करें।)

धर्मपत्नीसमेतस्य अस्माकं सह कुटुम्बानां क्षेम स्थैर्य विजयायुरारोग्यैश्वर्याभिवृद्ध्यर्थं, चतुर्विध फल पुरुषार्थ सिध्यर्थं, इष्टकाम्यार्थसिद्ध्यर्थं, मनेवांछफलसिद्ध्यर्थं, समस्त दुरितोपशान्त्यर्थं, समस्त मंगलावाप्त्यर्थं, वर्षे वर्षे प्रयुक्त श्री वरसिद्धि विनायक चतुर्थी उद्दिश्य, श्री वरसिद्धिविनायक स्वामी देवता प्रीत्यर्थं कल्पोक्तप्रकारेण यावच्छक्ति ध्यानावाहनादि षोडशोपचारपूजा विधानेना श्री वरसिद्धि विनायक व्रत पूजां करिष्ये। (इस मंत्र को बोलते हुए दाये हाथ की मध्यमा उंगली से जल का स्पर्श करे।) आदौ निर्विघ्नेन परिसमाप्त्यर्थं श्री गणाधिपति पूजां करिष्ये, तदंगकलशपूजां करिष्ये।

कलश की पूजा

कलशं गंध पुष्पाक्षतै रभ्यरच्य।
तस्योपरि हस्तंनिधाय।

(कलश के नीचे हल्दी, कुंकुम रोली रखे। उस पर जल से भरा हुआ कलश स्थापित करें। कलश को गंध, अक्षत समर्पित करें। उसमें तुलसी के पत्तों को डालकर दाये हाथ कलश पर रख लें।) बाद में

कलशस्यमुखे विष्णुः कण्ठे रुद्र स्समाश्रितः
मूले तत्र स्थितो ब्रह्मा, मध्ये मातृगणास्स्थिताः
कुक्षौ तु सागरास्सर्वे सप्तद्वीपा वसुन्धरा
ऋग्वेदोऽथ यजुर्वेद स्सामवेदो ह्यथर्वणः
अंगैश्च सहितास्सर्वे कलशाम्बु समाश्रिताः
आयान्तु देवपूजार्थं दुरितक्षयकारकाः

(इन श्लोकों का उच्चारण करते हुए पत्ते को जल में सव्य दिशा में घुमाये।)

ॐ गंगे च यमुनेचैवकृष्णे गोदावरि सरस्वति।
नर्मदे सिन्धु कावेरी जलेस्मिन् सन्निधिंकुरु।।
कलशोदकेन पूजाद्रव्याणि देवं आत्मानं च सम्प्रोक्ष्य

पान से कलश के जल को पूजा सामग्री पर, गणेश पर स्वयं पर छिड़के। बाद में हरिद्रा गणपति की पूजा करें।

महागणपति पूजा

गणानांत्वां गणपतिगं हवामहे,
कविं कवीना मुपमश्रवःस्तवम्
ज्येष्ठराजं ब्रह्मणां ब्रह्मण्यस्पत्यः
आनश्शृण्वन्नूतिभिस्सीद साधनं।।
श्री महागणाधिपतये नमः।।
ध्यानावाहनादि षोडशोपचार पूजां करिष्ये

(मध्यमा उंगली से जल का स्पर्श करे)

ध्यानम्

ॐ शुक्लाम्बरधरं विष्णुं शशिवर्णं चतुर्भुजम्।
प्रसन्नवदनं ध्यायेत् सर्वविघ्नोपशान्तये।।

इस श्लोक को बोलते हुए फूल, अक्षत दोनों को मिलाकर, गणपति के पास रख ले। पूजा को भगवान के चरणों के पास ही करें। सर पर फूल, अक्षत न छिड़के।

ॐ श्री महागणपतिं ध्यायामि ध्यानं समर्पयामि, ॐ श्री महागणपतिं आवाहयामि, ॐ श्री महागणपते नमः आसनं समर्पयामि (फूल, अक्षत समर्पित कर नमस्कार करें।)

(बाद में) (उद्धरिणी से जल दिखाकर अर्घ्यपात्र में डालते हुए) पादयोः पाद्यं समर्पयामि, हस्तयोः अर्घ्यं समर्पयामि, मुखे शुद्ध आचमनीयं समर्पयामि।

इस मंत्र का उच्चारण करते हुए हरिद्रा गणेश को जल दिखाकर, उस जल को छोटे पात्र में डाल दे।

(हरिद्रा गणपति की पूजा गंधं, अक्षत, कुंकुम, पुष्पों से करें। अगरबत्ती जलाकर, गुड़ या फल, भोग लगाकर षोडशोपचार पूजा करें।)

यथाभागं गुड़ं निवेदयामि।

श्री महागणाधिपति स्सुप्रसन्नो, सुप्रीतो, वरदो भवतु।
श्री महागणाधिपति प्रसादं शिरसा गृह्णामि।

बोलते हुए अक्षत अपने सर पर डाल लें।

श्री महागणाधिपतये नमः यथास्थानं प्रवेशयामि।
शोभनार्थे क्षेमाय पुनरागमनाय च

मंत्र को बोलते हुए हरिद्रागणपति को थोडासा पूर्व की तरफ घुमाकर, अक्षत डालकर, नमस्कार करें। पुनः आचमन कर, उपर्युक्त रीति से पुनः संकल्प करें।

अथ श्री वरसिद्धि विनायक पूजां करिष्ये,
तदंग प्राणप्रतिष्ठापनं करिष्ये-

बोलते हुए दाये हाथ की मध्यम उंगली से जल का स्पर्श करें।

श्री वरसिद्धि विनायक की प्राणप्रतिष्ठा

(मूर्ति पर पुष्प से थोडासा पंचामृत छिड़क कर)

ॐ आं ह्रीं क्रों यं रं लं वं शं षं सं हं - इत्याद्येन प्राणप्रतिष्ठापनं कृत्वा, नमस्कृत्वा (नमस्कार करते हुए) ॐ श्री वरसिद्धि विनायकाय नमः

ॐ स्वामिन्! सर्वजगन्नाथ! यावत्पूजावसानकम्।
तावत्त्वं प्रीतिभावेन बिम्बेऽस्मिन् सन्निधिंकुरु।।

आवाहितो भव, स्थापितोभव, सुप्रसन्नोभव, स्थिरासनं कुरु अवकुण्ठितोभव, वरदोभव, प्रसीद प्रसीद प्रसीद

(बोलते हुए गणेश की मूर्ति के चरणों पर पुष्प, अक्षत समर्पित कर नमस्कार करें)

षोडशोपचार पूजा

भवसंचित पापौघ विध्वंसन विचक्षणम्।
विघ्नान्धकार भास्वंतं विघ्नराज महं भजे।।

ॐ एकदन्तं शूर्पकर्णं गजवक्त्रं चतुर्भुजम्।
पाशांकुशधरं देवं ध्यायेत्सिद्धि विनायकम्।।

उत्तमं गणनाथस्य व्रतं संपत्करं शुभम्।
भक्ताभीष्टप्रदं तस्मात् ध्यायेत्तं विघ्ननायकं।।

ध्यायेद्गजाननं देवं तत्पकांचनसन्निभं।
चतुर्भुजं महाकायं सर्वाभरणभूषितम्।।

श्री वरसिद्धि विनायकस्वामीने नमः ध्यायामि।

(गणेश की मूर्ति के चरणों पर पुष्प, अक्षत समर्पित कर नमस्कार करें)

आवाहनम्

ॐ अत्रागच्छ जगद्वन्द्य सुरराजार्चितेश्वर।
अनाथनाथ सर्वज्ञ गौरीगर्भ समुद्भव।।

ॐ श्री वरसिद्धि विनायकस्वामिने नमः आवाहयामि। (पुनः अक्षत ड़ाले)

आसनम्

मौक्तिकैः पुष्यरागैश्च नानारत्नैर्विराजितम्।
रत्नसिंहासनं चारुप्रीत्यर्थं प्रतिगृह्यताम्।।

आसनं समर्पयामि। (अक्षत या फूलों को ड़ाले)

अर्घ्यम्

गौरीपुत्र नमस्तेऽस्तु शंकरप्रियनन्दन।
गृहाणार्घ्यं मयादत्तं गंधपुष्पाक्षतैर्युतम्।।

अर्घ्यम् समर्पयामि। (उद्दरिणी से जल के गणेशजी को दिखाकर बगल में रखे हुए अन्य पात्र में ड़ाले।)

पाद्यम्

गजवक्त्र नमस्तेऽस्तु सर्वाभीष्टप्रदायक।
भक्त्यापाद्यं मयादत्तं गृहाण द्विरजानन।।

पाद्यं समर्पयामि। (थोडासा जल गणेशजी को दिखाकर चरणों में समर्पित करें)

आचमनीयम्

अनाथनाथ सर्वज्ञ गीर्वाण गणपूजित।
गृहाणाचमनं देव तुभ्यं दत्तं मयाप्रभो।।

आचमनीयं समर्पयामि। (थोडासा जल गणेशजी को दिखाकर पात्र में ड़ालें)

मधुपर्कम्

दधिक्षीरसमायुक्तं मध्वाज्येन समन्वितम्।
मधुपर्कं गृहाणेदं गजवक्त्र नमोऽस्तुते।।

मधुपर्कं समर्पयामि। (गणेशजी को मधुपर्क समर्पित करें)

पंचामृत स्नानम्

ॐ स्नानं पंचामृतैर्देव गृहाण गणनायक।
अनाथनाथ सर्वज्ञ गीर्वाणगणपूजित।।

पंचामृतस्नानम् समर्पयामि। (गाय के दूध, दही, घी, शक्कर और शहद से मिश्रित पदार्थ को एक फूल के माध्यम से विग्रह पर चिढ़कना चाहिए।)

शुद्धोदकस्नानम्

ॐ गंगादि सर्वतीर्थेभ्यः आहृतै रमलैर्जलैः।
स्नानं कुरुष्व भगवन्नुमापुत्र! नमोऽस्तुते।
शुद्धोदकस्नानं समर्पयामि। (कलश के जल से स्नान)

वस्त्रम्

ॐ रक्तवस्त्रद्वयं चारु देवयोग्यं च मंगलम्।
शुभप्रदं गृहाण त्वं लम्बोदर हरात्मज।।
वस्त्रयुग्मं समर्पयामि। (गणेश को वस्त्र समर्पित करें। अथवा रुई को हल्दी, कुंकुम लगाकर वस्त्र के रूप में समर्पित करें।)

यज्ञोपवीतम्

राजितं ब्रह्मसूत्रंच कांचनंचोत्तरीयकम्।
गृहाण देव! सर्वध्वज्ञ भक्तानामिष्टदायक।।
यज्ञोपवीतं समर्पयामि। (जनेऊ को समर्पित करें)

गंधम्

ॐ चन्दनागरुकर्पूरकस्तूरीकुंकुमान्वितम्।
विलेपनं सुरश्रेष्ठ! प्रीत्यर्थं प्रतिगृह्यताम्।
दिव्य परिमल गंधं समर्पयामि। (गणेशजी को थोडासा गंधं समर्पित करें)

अक्षत

ॐ अक्षतान् धवलान् दिव्यान् शालीयान् तण्डुलान् शुभान्।
गृहाण परमानन्द! शम्भुपुत्र! नमोऽस्तुते।।
अक्षतान् समर्पयामि। (गणेशजी को अक्षत समर्पित करें)

पत्र पुष्प

ॐ सुगन्धानि च सुपुष्पाणि जाजीकुन्दमुखानि च।
एकविंशतिपत्राणि, संगृहाण नमोऽस्तुते।।
पत्र पुष्पाणि समर्पयामि। (गणेशजी को पत्र पुष्पों से पूजन करें)

अथा अंगपूजा

(निम्न नामों को एक व्यक्ति पढ़े। दूसरा अक्षत ड़ालते रहे।)

ॐ गणेशाय नमः	पादौ पूजयामि	(चरणों में अक्षत डालो)
ॐ एकदन्ताय नमः	गुल्फौ पूजयामि	(गुल्फ)
ॐ शूर्पकर्णाय नमः	जानुनी पूजयामि	(घुटने)
ॐ विघ्नराजाय नमः	जंघे पूजयामि	(जांघों)
ॐ आखुवाहनाय नमः	ऊरू पूजयामि	(ऊरु)
ॐ हेरम्बाय नमः	कटिं पूजयामि	(नितंब)
ॐ लम्बोदराय नमः	उदरं पूजयामि	(उदर)
ॐ गणनाथाय नमः	नाभिं पूजयामि	(नाभि)
ॐ गणेशाय नमः	हृदयं पूजयामि	(हृदय)
ॐ स्थूलकण्ठाय नमः	कण्ठं पूजयामि	(कण्ठ)
ॐ स्कन्दाग्रजाय नमः	स्कन्धौ पूजयामि	(भुजाएँ)
ॐ पाशहस्ताय नमः	हस्तौ पूजयामि	(हाथ)
ॐ गजवक्त्राय नमः	वक्त्रं पूजयामि	(मुख)
ॐ विघ्नहन्त्रे नमः	नेत्रे पूजयामि	(नेत्र)
ॐ शूर्पकर्णाय नमः	कर्णौ पूजयामि	(कान)
ॐ फालचन्द्राय नमः	ललाटं पूजयामि	(ललाट)
ॐ सर्वेश्वराय नमः	शिरः पूजयामि	(सर)
ॐ विघ्नराजाय नमः	सर्वाण्यंगानि पूजयामि	(पूरा शरीर)

(ऐसा कहकर हाथबर फूल लेकर सिर से लेकर चरणों तक फूलों को चढ़ना चाहिए।)

एकविंशति पत्र पूजा

(एक एक नाम को बोलते हुए विभिन्न पत्रों को गणेश को समर्पित करें)

ॐ सुमुखाय नमः	माचीपत्रं पूजयामि	(माचीपत्र)
ॐ गणाधिपायनमः	बृहतीपत्रं पूजयामि	(बृहती पत्र)
ॐ उमापुत्राय नमः	बिल्वपत्रं पूजयामि	(बिल्व)
ॐ गजाननाय नमः	दूर्वायुग्मं पूजयामि	(दूर्वा)
ॐ हरसूनवे नमः	दत्तूरपत्रं पूजयामि	(धत्तूरा)
ॐ लम्बोदराय नमः	बदरीपत्रं पूजयामि	(बदरी)
ॐ गुहाग्रजाय नमः	अपामार्गपत्रं पूजयामि	(अपामार्ग)
ॐ गजकर्णाय नमः	तुलसी पत्रं पूजयामि	(तुलसी)
ॐ एकदन्ताय नमः	चूतपत्रं पूजयामि	(आम का पत्ता)
ॐ विकटाय नमः	करवीरपत्रं पूजयामि	(कनेर)
ॐ भिन्नदन्ताय नमः	विष्णुक्रांतपत्रं पूजयामि	(विष्णुक्रांत)
ॐ वटवे नमः	दाड़िमीपत्रं पूजयामि	(अनार)
ॐ सर्वेश्वराय नमः	देवदारुपत्रं पूजयामि	(देवदारु)
ॐ फालचन्द्रया नमः	मरुवकपत्रं पूजयामि	(मरुवक)
ॐ हेरम्बाय नमः	सिन्धुवारपत्रं पूजयामि	(सिन्धुवार)
ॐ शूर्पकर्णाय नमः	जाजीपत्रं पूजयामि	(जाजीपत्र)
ॐ सुराग्रजाय नमः	गण्डकी पत्रं पूजयामि	(सफेद गरिका)
ॐ इभवक्त्राय नमः	शमीपत्रं पूजयामि	(शमी)
ॐ विनायकाय नमः	अश्वत्थपत्रं पूजयामि	(अश्वत्थ)
ॐ सुरसेविताय नमः	अर्जुनपत्रं पूजयामि	(अर्जुन)
ॐ कपिलाय नमः	अर्कपत्रं पूजयामि	(सफेद अर्क)

ॐ श्री गणेश्वराय नमः एकविंशतिपत्राणि पूजयामि।

(बाद में श्री गणेश अष्टोत्तरशतनामों को पढ़ते हुए गणेश जी की पूजा पुष्पों से या अक्षत से करें)

श्री विनायक(गणेश) अष्टोत्तर शतनामावली

(इन नामों को पढ़ते हुए गणेश की पूजा पुष्पों से या अक्षत से करें। एक व्यक्ति नामों को पढ़ते रहे। अन्य व्यक्ति 'ॐ' बोलकर पूजा करें।)

ॐ गजाननाय नमः
ॐ गणाध्यक्षाय नमः
ॐ विघ्नराजाय नमः
ॐ विनायकाय नमः
ॐ द्वैमातुराय नमः
ॐ द्विमुखाय नमः
ॐ प्रमुखाय नमः
ॐ सुमुखाय नमः
ॐ कृतिने नमः
ॐ सुप्रदीपाय नमः 10

ॐ सुखनिधये नमः
ॐ सुराध्यक्षाय नमः
ॐ सुरारिघ्नाय नमः
ॐ महागणपतये नमः
ॐ मान्याय नमः
ॐ महाकालाय नमः
ॐ महाबलाय नमः
ॐ हेरंबाय नमः
ॐ लम्बजठराय नमः
ॐ ह्रस्वग्रीवाय नमः 20

ॐ महोदराय नमः
ॐ मदोत्कटाय नमः
ॐ महावीराय नमः
ॐ मंत्रिणे नमः
ॐ मंगलस्वराय नमः
ॐ प्रमथाय नमः
ॐ प्रथमाय नमः
ॐ प्राज्ञाय नमः
ॐ विघ्नकर्त्रे नमः
ॐ विघ्नहंत्रे नमः 30

ॐ विश्वनेत्रे नमः
ॐ विराट्पतये नमः
ॐ श्रीपतये नमः
ॐ वाक्पतये नमः
ॐ श्रृंगारिणे नमः
ॐ आश्रितवत्सलाय नमः
ॐ शिवप्रियाय नमः
ॐ प्रमुखाय नमः
ॐ शीघ्रकारिणे नमः
ॐ बलाय नमः 40

ॐ बलोत्थित्ताय नमः
ॐ भवात्मजाय नमः
ॐ पुराणपुरुषाय नमः
ॐ पूष्णे नमः
ॐ पुष्करोक्षिप्तवारिणे नमः
ॐ अग्रगण्याय नमः
ॐ अग्रपूज्याय नमः
ॐ अग्रगामिने नमः
ॐ मंत्रकृते नमः
ॐ चामीकरप्रभाय नमः 50

ॐ सर्वस्मै नमः
ॐ सर्वोपास्याय नमः
ॐ सर्वकत्रे नमः
ॐ सर्वनेत्रे नमः
ॐ सर्वसिद्धि प्रसादाय नमः
ॐ सर्वसिद्धये नमः
ॐ पंचहस्ताय नमः
ॐ पार्वतीनन्दनाय नमः
ॐ प्रभवे नमः
ॐ कुमारगुरवे नमः 60

ॐ अक्षोभ्याय नमः
ॐ कुंजरासुरभंजनाय नमः
ॐ प्रमोदात्तानानाय नमः
ॐ मादेकप्रियाय नमः
ॐ कांतिमते नमः
ॐ धृतिमते नमः
ॐ कामिने नमः
ॐ कपित्थपनसप्रियाय नमः
ॐ ब्रह्मचारिणे नमः
ॐ ब्रह्मरुपिणे नमः 70

ॐ ब्रह्मविद्यादिदानभुवे नमः
ॐ जिष्णवे नमः
ॐ विष्णुप्रियाय नमः
ॐ भक्तजीविताय नमः
ॐ जितमन्मथाय नमः
ॐ ऐश्वर्यकारणाय नमः
ॐ ज्यायसे नमः
ॐ यक्षकिन्नर सेविताय नमः
ॐ गंगासुताय नमः
ॐ गणाधीशाय नमः 80

ॐ गंभीरनिनदाय नमः
ॐ वटवे नमः
ॐ अभीष्टवरदाय नमः
ॐ ज्योतिषे नमः
ॐ भक्तनिधये नमः
ॐ भावगम्याय नमः
ॐ मंगलप्रदाय नमः
ॐ अव्यक्ताय नमः
ॐ अप्राकृत पराक्रमाय नमः
ॐ सत्यधर्मिणे नमः 90

ॐ सखये नमः
ॐ सरसांबुनिधये नमः
ॐ महेशाय नमः
ॐ दिव्यांगाय नमः
ॐ मणिकिंकिणीमेखलाय नमः
ॐ समस्तदेवतामूर्तये नमः
ॐ सहिष्णवे नमः
ॐ सततोत्थिताय नमः
ॐ विघातकारिणे नमः
ॐ विश्वदृशे नमः 100

ॐ विश्वरक्षाकृते नमः
ॐ कल्याणगुरवे नमः
ॐ उन्मत्तवेषाय नमः
ॐ अपराजिते नमः
ॐ समस्त जगदाधाराय नमः
ॐ सर्वेश्वर्यप्रदाय नमः
ॐ आक्रान्तचिदचित्प्रभवे नमः
ॐ विघ्नेश्वराय नमः 108

(ॐ श्री वरसिद्धि विनायक स्वामिने नमः अष्टोत्तर शतनाम पुष्पपूजां समर्पयामि। पुष्प, अक्षत गणेश के चरणों में समर्पित करें)

धूपम्

दशांगं गुग्गुलोपेतं सुगन्धं सुमनोहरम्।
उमासुत! नमस्तुभ्यं गृहाणवरदोभव।।

दिव्य परिमल धूपमाघ्रापयामि। (अगरबत्ती जलाकर, गणेश को धूप दिखाए। उस अगरबत्ती बगल के स्टैण्ड में चुभोदे)

दीपम्

ॐ साज्यं त्रिवर्तिसंयुक्तं वह्निना ध्योतितं मया।
गृहाण मंगलं दीपं ईशपुत्र! नमोऽस्तुते।।

दीपं दर्शयामि। (गणेशजी को दीप दिखावें।)

नैवेद्य

(अगर नारियल है तो सब को फोड़कर भोग लगावें। स्नान के समय, इतः पूर्व फोडे-गये नारियल, मिष्टान्न, गुड़ का शरबत, वड़पप्पु(मूंगदाल), मोदक, केले, पुलिहोरा इत्यादि भगवान गणपति को समर्पित करें।)

सुगन्धान् सुकृतां श्चैव मोदकान् घृतपाचितान्।
नैवेद्यं गृह्यतां देव चणमुद्गैः प्रकल्पितान्।।

भक्ष्यं, भोज्यं च लेह्यं च चोष्यं पानीयमेव च।
इदं गृहाण नैवेद्यं मया दत्तं विनायक।।

महानैवेद्यं समर्पयामि।

(मंत्रोच्चारण करते हुए पानी से इन सभी पदार्थों पर थोडासा जल छिड़के। बाद में गणेशजी को भोग लगावें)

ताम्बूलम्

ॐ पूगीफलसमायुक्तं नागवल्ली दलैर्युतम्।
कर्पूरचूर्णसंयुक्तं ताम्बूलं प्रतिगृह्यताम्।

ताम्बूलं समर्पयामि। (तीन पान, तीन सुपारी, फल, दक्षिणा से युक्त ताम्बूल को गणेशजी की मूर्ति के सामने रखकर प्रणाम करें)

पुष्पम्

ॐ सच्चिदानन्द! विघ्नेश! पुष्कलानि धनानि च।
भूम्यां स्थितानि पुष्पाणि स्वीकुरुष्व विनायक।।

सुवर्णमन्त्रपुष्पं समर्पयामि।

नीराजनम्

घृतवर्ति सहस्रैश्च कर्पूरशकलैस्तथा।
नीराजनं मयादत्तं गृहाण वरदो भव।।

नीरजनं समर्पयामि। (कपूर जला कर गणेश की आरती उतारें। बाद में आरती के प्लेट में जल छिड़क कर उस को नेत्रों पर लगाए।)

मंत्रपुष्पम्

(पुष्प, अक्षत लेकर खडे होकर इस श्लोक का पठन करे।)

सुमुखश्चैकदन्तश्च कपिलो गजकर्णकः।
लम्बोदरश्च विकटो विघ्नराजो गणाधिपः।।
धूमकेतुः गणाध्यक्षो फालचन्द्रो गजाननः।
वक्रतुण्ड महाकाय कोटिसूर्य समप्रभ।
अविघ्नं कुरु मे देव सर्वकार्येषु सर्वदा।।

परिक्रमा

यानि कानि च पापानि जन्मान्तरकृतानि च।
तानि तानि प्रणश्यन्ति प्रदक्षिण पदेपदे।।
पापोहं पापकर्मोहं पापात्मा पापसम्भवः।
त्राहिमां कृपया देव शरणागतवत्सल।।
अन्यथाशरणं नास्ति त्वमेव शरणं मम।
तस्मात्कारुण्यभावेन रक्ष रक्ष गणाधिप।।

आत्मप्रदक्षिण नमस्कारान् समर्पयामि

(परिक्रमा करके प्रणाम करें। दण्डवत् प्रणाम करने की परंपरा है।) बाद में बैठकर अक्षत हाथ में लेलें। थोडा जल, अक्षत पर छिड़ककर निम्न श्लोक का उच्चारण करें।

क्षमा प्रार्थना

यस्य स्मृत्याच नामोक्त्या तपःपूजा क्रियादिषु
न्यूनं सम्पूर्णतां याति सद्यो वन्दे गणाधिपम्
मन्त्रहीनं क्रियाहीनं शक्तिहीनं महाप्रभो
यत्पूजितं मया देव! परिपूर्णं तदस्तुते।।
अनया ध्यानावहनादि षोड़शोपचार पूज याच,
अष्टोत्तर नामार्चनयाच, अवसर महानिवेदनयाच
भगवान् सर्वात्मकः सर्वं श्री महागणाधिपति देवतार्पणमस्तु।
श्री महागणाधिपति देवता सुप्रीतः सुप्रसन्नो वरदो भवतु।

बोलते हुए पात्र में जल, अक्षत छोड़ दें।
इस प्रकार पूजा करने के उपरांत विनायक व्रतकथाओं का पठन करें।

श्री विनायक(गणेश) व्रतकथा

व्रतकथा

(व्रतकथा को धीरे-धीरे ऊँची आवाज में इस तरीके से पढ़े तो सबको समझ में आजाय।)

कथा पूर्ण होने के बाद एक नारियल फोड़कर गणेश को भोग लगाए। कपूर से आरती करे।

श्री विनायक(गणेश) व्रतकथा

सूचना : (कथा वाचन करने से पहले भक्तों को थोड़े से फूल, अक्षत देकर, उन दोनों चीजों को संबाल कर रखने के लिए कहे। कथा पूर्ण होने के बाद फूल एवं अक्षत को गणेशजी के चरणों में समर्पित कर नमस्कार करने का निर्देश दे।)

कथा

ॐ गुरुर्ब्रह्मा, गुरुर्विष्णुः गुरुर्देवो महेश्वरः।
गुरुः साक्षात् परब्रह्म तस्मै श्रीगुरवे नमः।।

ॐ शुक्लाम्बरधरं विष्णुं शशिवर्णं चतुर्भुजम्।
प्रसन्नवदनं ध्यायेत् सर्वविघ्नोपशान्तये।।

ॐ सरस्वति! नमस्तुभ्यं वरदे कामरूपिणि।
विद्यारम्भं करिष्यामि सिद्धिर्भवतु मे सदा।।

प्राचीन काल में चंद्रवंश में ''धर्मराज'' नामके एक विख्यात महाराज थे। दैवीसहायता के अभाव में उसने अपना राज्य खो दिया। रिस्तेदारों के हाथों में चला गया। अपने भाईयों, पत्नी के साथ अरण्य की ओर महाराज ने प्रस्थान किया।

उस अरण्य में ब्रह्मज्ञानी महर्षि लोग तपस्या में लगे थे। उनको प्रणाम कर राजा ने वहाँ पर विद्यमान सूतमहामुनि के आश्रम में प्रवेश किया। उस मुनीश्वर को नमस्कार किया।

मुनि की अनुमति से बैठकर, विनम्रतापूर्ण तरीके से प्रार्थना की महाराज ने- ''महात्मन्! हमारे रिस्तेदार कौरवों ने कपट द्यूत रचाकर, हमारा राज्य छीन लिया। हमको द्रौपदी को प्रताड़ित किया। हमें बहुत कुछ दुःख झेलने के लिए मजबूर कर दिया। हमारा भाग्य ठीक था। अतः आप का दर्शन का सौभाग्य हमें संप्राप्त हुआ। हमें पूरा विश्वास है कि हमारा शोक नष्ट हो चुका है। कृपा करके हमें कोई ऐसा एक अद्वितीय व्रत बतलाए ताकि हम अपना खोया हुआ राज्य वापस प्राप्त कर सकें।''

तब सूत महामुनि ने कहा - ''पाण्डव! सुनो! बता रहा हूँ। सभी व्रतों में से श्रेष्ठ एक व्रत है। इस व्रत के माध्यम से मनुष्य सभी प्रकार के ऐश्वर्य, भोग भाग्य, सुरव को प्राप्त कर सकता है। इस व्रत सभी पापों का निर्मूलन करता है। वंश को आगे बढ़ाता है। प्राचीन काल में परम शिव ने अपने पुत्र कुमारस्वामी को इस व्रत की जानकारी दी। उन सभी चीजों के बारे में बताता हूँ।

एक बार कैलास में कुमारस्वामी ने नमस्कार कर शिवजी से पूछा - ''भगवान! किस व्रत के माध्यम से मनुष्य संपत्ति, संतान, वंशवृद्धि धन धान्य प्राप्त कर सुखी जीवन बिताएँगे। कृपया हमें बता दे।'' हर्ष के साथ शिवजी ने कहा- ''इन सभी चीजों को प्रदान करने वाला एक महान् व्रत है। उसका नाम ''विनायक (गणेश) व्रत'' है। भाद्रपद शुक्ल चतुर्थी के दिन, इस व्रत का आचरण, भक्ति से श्रद्धापूर्वक करें।

इस व्रत को पुराने कल्प में देवताओं ने, मुनियों ने, गन्धर्वों ने, किन्नरों ने भक्तिपूर्वक किया था।

अतः हे धर्मराज! आप भी इस विनायक व्रत को नियमानुसार करो। आप को जय, राज्य, संपत्ति सब कुछ मिलेगा। इस व्रत को करने के माध्यम से दमयंती ने नल को पति के रूप में प्राप्त किया। श्रीकृष्ण ने इस व्रत के माध्यम से जांबवती को, श्यमंतकमणि को प्राप्त किया। उस कथा को बोलता हूँ। सुनो!

प्राचीन काल में सत्राजित् राजा ने सूर्य की उपासना कर, हर दिन आठ बारुव स्वर्ण प्रदान करनेवाली 'श्यमंतक' दिव्यमणि को प्राप्त किया। सत्राजित् के भाई प्रसेन ने दिव्यमणि को धारण करने की इच्छा प्रकट की। सत्राजित् ने अपने अनुज को उस मणि को दे दिया। सत्राजित् ने इस मणि का धारण कर। कृष्ण के पास पहुँचा। कृष्ण ने उस मणि को माँगा। लेकिन सत्राजित् ने मना किया। वह चला गया। एक दिन प्रसेन इस मणि को गले में धारण कर मृगया के लिए चला गया। मणि को मांस का टुकडा मानकर एक सिंह ने प्रसेन को मार कर उस मणि को हड़प लिया। इतने में एक भालुओं के राजा ने, वहाँ सिंह को मार कर, मणि को अपने घर की

गुफा में झूले पर बांध दिया। उसको अपने बेटी जांबवती को प्रदान किया। उसका नाम था जांबवंत।

प्रसेन की हत्या का समाचार सुनकर सत्राजित् ने सोचा कि कृष्ण ने मणि के लालच में अपने अनुज की हत्या कर दी। सत्य तो यह है कि सिंह ने प्रसेन को मारा था। किंतु श्रीकृष्ण पर कलंक लग गया। निंदा से मुक्त होने के लिए कृष्ण ने मणि के अन्वेषण करने के लिए अरण्य की ओर प्रस्थान किया। अरण्य में प्रसेन के शव को देखकर, सिंह को देखकर उसके पैरों के चिह्नों को देखते हुए श्रीकृष्ण ने एक गुफा में प्रवेश किया। कृष्ण ने वहाँ पर मणि के साथ खेलती हुई जांबवती को देखा।

कृष्ण ने मणि को छीनने की कोशिश की। जांबवंत ने उसे रोका। दोनों के बीच में 28 दिन तक घमासान युद्ध हुआ। जांबवंत दुर्बल हो गया। उसने कृष्ण को श्रीराम के रूप में पहचान लिया। जांबवत ने कहा- ''भगवान! मेरी गलती को माफ करें। उस जमाने में आप से द्वंद्वयुद्ध का पर माँगा था। आपने कहा था कि यह अभिलाषा भविष्य में पूर्ण होगी। तब से आप ही का नामस्मरण कर रहा हूँ। आज मेरे सौभाग्य के कारण इस प्रकार मेरी आकांक्षा पूर्ण हुई। मेरे अपराध को क्षमा करे''। इस प्रकार प्रार्थना की।

श्रीकृष्ण ने हर्ष से कहा- ''जांबवंत! मेरे ऊपर लगे हुए कलंक को हटाने के लिए यहाँ पर आया था। उस मणि को मुझे देदो।'' अत्यंत हर्ष के साथ जांबवंत ने श्यमंतकमणि के साथ अपनी पुत्री जांबवती को उपहार स्वरूप कृष्ण को प्रदान किया। श्रीकृष्ण जांबवती एवं श्यमंतकमणि के साथ द्वारका नगर पहुँच गए। सत्राजित् को आमंत्रित कर पूरा वृत्तान्त बता दिया। कृष्ण की बातों को सुनने के बाद सत्राजित् पश्चात्ताप से तप्त होकर मणि के साथ अपनी पुत्रिका सत्यभामा को प्रदान किया। कृष्ण ने श्यमंतकमणि लेने से इनकार कर, सत्यभामा को लेकर प्रस्थान किया। शुभ मुहूर्त में जांबवती, सत्यभामा दोनों के साथ विवाह कर लिया।

विनायक चतुर्थी के दिन दूध में चन्द्रमा का दर्शन करने से निन्दा का सामना करना पड़ा। लंबोदर विनायक को देखकर चन्द्र ने हसीमजाक की। पार्वती क्रोधित होकर बोली - ''हे चाँद! चतुर्थी के दिन आप को देखने वालों पर कलंक लग जाता है।'' इस प्रकार पार्वती ने श्राप दे दिया। चन्द्र ने पश्चात्ताप से प्रार्थना करने पर पार्वती ने कहा- जो लोग भाद्रपद शुद्ध चतुर्थी के अवसर पर विनायक की पूजा करते हैं, उनको निंदा का सामना नहीं करना पड़ेगा। एक दिन गाय का दूध निकालते समय उस दूध में चतुर्थी के चन्द्र का दर्शन किया था। जिसकी वजह से कृष्ण को लोक निंदा को भुगतना पड़ा। विनायक व्रत के आचरण के बाद कृष्ण निंदा से मुक्त हुए। अगर भाद्रपद शुद्ध चतुर्थी के दिन कोई भी व्यक्ति चन्द्र का दर्शन करेगा, उस दिन विनायक व्रत कर श्यमंतकमणि की कथा सुनकर, अक्षत सर पर डालने से सभी प्रकार के कलंकों से भक्त मुक्त हो जाता है।

प्राचीन काल में भगीरथ ने गंगा को भूलोक पर अवतरित करने के लिए गणेश व्रत का आचरण किया था। देवताओं ने राक्षसों ने क्षीरसागर मंथन की वेला में विनायक व्रत का आचरण किया था। सांब ने अपने कुष्ठरोग के निवारण के लिए विनायक व्रत का आचरण किया था। इन सभी लोगों ने मनोरथों को सफल बनाया। इस प्रकार सूतमुनि ने बताया। धर्मराज ने भक्ति पूर्वक इस व्रत का आचरण कर, शत्रुओं का वध कर, राज्य को प्राप्त किया। सुखी जीवन बिता दिया। इस गणेश की पूजा से सभी अभिलाषाएँ पूर्ण होती ही है।

उद्यापन

यज्ञेन यज्ञ मयजन्त देवाः तानि धर्माणि प्रथमान्यासन्।
तेहनाकं महिमानः सचन्ते यत्र पूर्वे साध्यास्सन्ति देवाः
श्री महागणाधिपतये नमः यथास्थानं प्रवेशयामि।
शोभनार्थं पुनरागमनायच।

उपर्युक्त मंत्र बोलते हुए गणेश की मूर्ति को ईशान्य दिशा की ओर घुमाकर भगवानजी को बिदा करें। (हर रोज नित्यपूजा कर चतुर्थी से 3,5,7,9,11 दिनों में निमज्जन करने वाले आखरी दिन इस मंत्र को पड़ कर उद्यापन करें)

अकालमृत्युहरणं सर्वव्याधिनिवारणम्।
समस्तपापक्षयकरं श्री महागणपति पदोदकं पावनं शुभम्।

मंत्र बोलते हुए पंचामृत एवं नारियल का पानी मिलाकर तीर्थ के रूप में सेवन करें। बाद में अक्षत बच्चों के सर पर डाल दें। बड़े बुजुर्ग भी अक्षत को अपने सर पर ड़ाल लें।

सर्वेजनास्सुखिनो भवन्तु ॐ शान्तिश्शान्तिश्शान्तिः

फलश्रुति

जिन लोगों ने इस गणेश व्रतकथा का पाठ किया और सुना, उन्हें भगवान गणेश जी की कृपा से कई शुभफल प्राप्त होंगे।

अनुवादक - डॉ.के.सुधाकर राव

महाबलशाली बलराम

हिंदू धर्म में भागवत पुराण के अनुसार बलराम या संकर्षण भगवान विष्णु का शेषावतार माने जाते हैं। मान्यता है कि भगवान विष्णु का अंश माने जाने वाले शेषनाग, उनके हर अवतार के साथ अवश्य धरती पर आते हैं। भगवान विष्णु के आठवें अवतार श्रीकृष्ण के बड़े भाई के रूप में शेषनाग ने बलराम जी के नाम से अवतार लिया था। इन्हें बलभद्र, दाऊ सहित अन्य नामों से भी जानते हैं। बलराम का जन्म भाद्रपद मास के कृष्ण पक्ष की षष्ठी तिथि को मनाया जाता है। इसलिए उनकी जयंती के ''हल षष्ठी'' या ''हलछठ'' के नाम से भी मनाया जाता है। इस दिन हल की जुताई से उगे हुए अनाज नहीं खाए जाते।

श्रीमन्नारायण प्रभु जी जब श्रीरामचंद्र के रूप में भूमि पर अवतरित हुए तब शेषनाग ने उनके छोटे भाई लक्ष्मण बनकर उनकी बहुत सेवा की। हर पल श्रीरामचंद्र की निगरानी करते रहे। इससे संतुष्ट श्रीरामचंद्रजी ने उनको वर दिया कि इस अवतार में तुमने मेरा छोटा भाई बनकर बहुत सेवा की। मैं चाहता हूँ कि अगले जन्म में आप मेरे बड़े भाई बने और मैं आपका छोटा भाई बनकर इस जन्म में आपने जो भी सेवा की उसके प्रतिफल के रूप में अगले जन्म में मैं भी आपकी सेवा करूँगा। इसलिए बलराम ने भगवान कृष्ण के बड़े भाई के रूप में जन्म लिया था।

भागवत कथा के अनुसार जब मथुरा नरेश कंस अपनी बहन देवकी और उनके पति वसुदेव को विदा कर रहा था, उसी समय आकाशवाणी प्रकट हुई। आकाशवाणी में देवकी और वसुदेव की आंठवी संतान को कंस का काल बताया था। इसलिए कंस ने देवकी और वसुदेव को कारगार में कैद कर दिया था। कंस ने एक-एक करके उनकी छह संतानों को मार दिया था। लेकिन जब सातवी संतान के रूप में शेषावतार भगवान बलराम ने गर्भ में प्रवेश किया तो श्रीहरि ने योगमाया से उन्हें माता रोहणी के गर्भ में स्थानांतरित कर दिया था। इसलिए उनका जन्म भगवान कृष्ण के बड़े भाई के रूप में नंदबाबा के यहाँ हुआ।

- डॉ.रमेशकृष्णा

बलराम मल्लयुद्ध, कुश्ती और गदायुद्ध में पारंगत थे तथा हाथ में हल धारण करते थे। इसलिए उन्हें हलधर भी कहा जाता है।

बलराम का नाम ''राम'' रखा गया था, लेकिन उनकी महान शक्ति के कारण उन्हें बलराम, बलदेव या बलभद्र कहा जाता था, जिसका अर्थ है शक्तिशाली राम। बलराम ने अपना बचपन अपने भाई कृष्ण के साथ एक गाय चराने वाले के रूप में बिताया। बलराम प्रसिद्ध किसान हैं, जो कृषि के साथ-साथ पशुधन के अवतारों में से एक हैं, जिनसे कृष्ण जुड़े हुए हैं। हल बलराम का हथियार है। भागवत पुराण में, वह इसका उपयोग असुरों से लड़ने, यमुना नदी को वृंदावन के करीब लाने के लिए रास्ता खोदने के लिए करते हैं, और उन्होंने हस्तिनापुर की पूरी राजधानी को गंगा नदी में खींचने के लिए भी इसका उपयोग किया।

हिंदू परंपरा में, बलराम को एक किसान के संरक्षक देवता के रूप में दर्शाया गया है, जो ''ज्ञान का अग्रदूत'', कृषि उपकरण और समृद्धि का प्रतीक है। शक्ति का प्रतीक बलराम जी भगवान श्रीकृष्ण के बड़े भाई व देवी रेवती के पति हैं। हाथों में हल व शरीर पर नीला वस्त्र धारण किए भगवान बलराम का रूप देखने को मिलता है। इन्हें किसानों का देवता भी माना जाता है। भीम और दुर्योधन इन्हें अपना गुरु मानते थे। माना जाता है कि बलराम जी इतने शक्तिशाली है कि एक बार अपने हल से जब धरती को खींच डाला तो सारी भूमि एक ओर मुड़ गई। यह घटना उनके अतिमानुष बल का परिचय कराती है।

भगवान बलराम को सामर्थ्य, धर्म और निष्ठा की प्रतीकाओं के रूप में देखा जाता है। वे अच्छी तरह से अपने सिद्धांतों के साथ खड़े रहने और धर्म की संरक्षण के लिए महत्वपूर्ण होते हैं। उनका भगवान कृष्ण के साथ का रिश्ता भाईचारे और प्रेम के संकेत के रूप में प्रस्तुत करता है। कुछ परंपराओं में, बलराम को आद्यात्मिक मार्ग के मूल गुरु के रूप में भी माना जाता है, जो अपने भक्तों को बोध की ओर मार्गदर्शन करते हैं। समग्र रूप से, भगवान बलराम की जीवन और शिक्षाएँ लाखों लोगों को प्रेरित करती हैं, सजगता, गुणवत्ता और भक्ति की महत्वपूर्ण बातों को महत्व देती है, एक धार्मिक जीवन के पुरस्कार के लिए शक्ति, गुणवत्ता और निष्ठ की मूल्यों की।

भगवान श्रीकृष्ण जी से जुड़ी कथाओं में उनके दाऊ यानी बलराम जी को विशिष्ट स्थान दिया गया है। बचपन से ही बलराम जी अत्यन्त गंभीर व शांत थे, जबकि कृष्ण जी बहुत शरारत करते थे। श्रीकृष्ण अपने बड़े भाई का विशेष सम्मान करते थे। बलराम भी श्रीकृष्ण की इच्छा का हमेशा ध्यान रखते थे। उन्हें लगभग हमेशा कृष्ण के साथ दिखाया और वर्णित किया जाता है, जैसे कि मक्खन चुराते हुए, बचपन की शरारतें करते हुए, यशोदा से शिकायत करते हुए कि उनके छोटे भाई कृष्ण ने मिट्टी खाई है, गायों के बाड़े में खेलते हुए, गुरु सांदीपनी के गुरुकुल में एक साथ पढ़ते हुए, और कंस द्वारा दोनों भाइयों को मारने के लिए भेजे गए दुष्ट जानवरों से लड़ते हुए। ब्रजलीला में शंखचूड़ का वध करके भगवान श्रीकृष्ण ने उसका शिरोरत्न भैया बलराम को उपहार के रूप में दिया था। कंस की मल्लशाला में भगवान श्रीकृष्ण जी ने चाणूर को पछाड़ा तो मुष्टिक बलरामजी के प्रहार से स्वर्ग सिधारा। जरासन्ध को बलराम जी अपना प्रतिद्वंदी मान बैठे थे। अगर श्रीकृष्णजी ने मना न किया होता तो बलराम जी पहले ही आक्रमण में जरासंध को यमलोक भेज देते। इस प्रकार इन दोनों भाईयों को एक दूसरे से बहुत प्यार है। भगवान श्रीकृष्ण के उपदेशों पर रचित श्रीमद्भागवत की कथाएँ बलरामजी के शौर्य की साक्षी हैं।

बलराम की कथाएँ महाभारत, हरिवंश, भागवत पुराण और अन्य पुराणों में मिलती हैं। उन्हें शेष और लक्ष्मण के देवताओं के साथ-साथ संकर्षण के व्यूह अवतार से पहचाना जाता है। शेष के अवतार के रूप में बलराम की कथा, जिस पर भगवान विष्णु का निवास है, विष्णु के साथ उनकी भूमिका और जुड़ाव को दर्शाती है। वे कृष्ण के निरंतर साथी हैं, हमेशा सतर्क रहते हैं, जिसके कारण वैष्णववाद

की पुष्टिमार्ग परंपरा में उन्हें ''लुक लुक दाऊजी'' (या लुक लुक दौबाबा) की उपाधि मिली है। शास्त्रीय तमिल कार्य अकानानुरु वह कृषकों के लिए ज्ञान का एक रचनात्मक भंडार है : वह ज्ञान जिसने यमुना के पानी को वृंदावन में लाने के लिए एक जल चैनल खोदा; जिसने उपवनों, खेतों और जंगलों को पुनर्स्थापित किया; जिसने वस्तुओं और पेय का उत्पादन किया।

जागन्नाथ परंपरा में भगवान बलराम को त्रिदेव देवताओं में से एक माना जाता है। शक्ति का प्रतीक बलराम जी को एक आज्ञाकारी पुत्र, आदर्श भाई व एक अच्छे पति के रूप में भी देखा जाता है। इन्हें हमेशा एक हल के साथ देखा जाता है, इसलिए बलराम जी को किसानों का भगवान कहते हैं। विष्णु पुराण के अनुसार, कृषि करने वाले लोगों को भगवान बलराम की पूजा अवश्य करनी चाहिए। कुछ भारतीय प्राचीन कलाओं और ग्रंथों में, बलराम (संकर्षण) और कृष्ण (वासुदेव) पांच नायकों (वृष्णियों के पंचवीर) में से दो हैं।

बलराम ने कौरवों के दुर्योधन और पांडवों के भीम दोनों को गदा से युद्ध करने की कला सिखाई। जब कौरवों और पांडवों के बीच युद्ध छिड़ गया, तो बलराम ने दोनों पक्षों के लिए दायित्व निभाए और इसलिए तटस्थ रहे। वह युद्ध के दौरान अपने भतीजे प्रद्युम्न और अन्य यादवों के साथ तीर्थयात्रा पर गए और अपने शिष्यों के बीच लड़ाई देखने के लिए अंतिम दिन लौटे। जब भीम ने अपनी गदा से दुर्योधन की जांघ पर वार करके उसे हरा दिया, जो युद्ध के नियमों का पारंपरिक उल्लंघन था, तो बलराम ने भीम को मारने की धमकी दी। इसे तब रोका गया जब कृष्ण ने बलराम को भीम की प्रतिज्ञा की याद दिलाई - दुर्योधन की जांघ को कुचलकर उसे मारना, जो भीम की पत्नी द्रौपदी के सामने उजागर हुई थी।

बलराम और उनके छोटे भाई भगवान कृष्ण के बीच एक गहरे और अलग नहीं की जा सकने वाले रिश्ते का साझा था। वे गोकुल में बड़े हुए और बाद में वृंदावन में रहते हुए विभिन्न बचपन के साहसों में शामिल होते थे। बलराम कृष्ण के लिए संरक्षण करने और पोषण करने की भूमिका निभाते थे। सूरदास की बाललीला वर्णनों में कृष्ण और बलराम से संबंधित ऐसे कई मार्मिक प्रसंग मिलते हैं।

मैया मोहि दाऊ बहुत खिझायौ।
मोसौं कहत मोल कौ लीन्हौ, तू जसुमति कब जायौ?
कहा करौं इहि रिस के मारैं खेलन हौं नहिं जात। पु
नि-पुनि कहत कौन है माता को है तेरौ तात।।
गोरे नंद जसोदा गोरी, तू कत स्यामल गात।
चुटुकी दै-दै ग्वाल नवावत, हँसत, सबै मुसुकात।।
तू मोही कौं मारन सीखी, दाउहि कबहुँ न खीझै।
मोहन-मुख रिस की ये बातैं, जसुमति सुनि-सुनि रीझै।।
सुनहु कान्ह, बलभद्र चबाई, जनमत ही कौ धूत।
सूर स्याम मोहि गोधन की सौं, हौं माता तू पूत।।

(श्रीकृष्ण कहते हैं, ''मैया! दाऊ दादा ने मुझे बहुत चिढ़ाया है। मुझसे कहते हैं ''तू मोल लिया हुआ है, यशोदा मैया ने भला तुझे कब उत्पन्न किया।'' क्या करूँ, इसी क्रोध के मारे मैं खेलने नहीं जाता। वे बार-बार कहते

हैं “तेरी माता कौन है? तेरे पिता कौन हैं? नंदबाबा तो गोरे हैं, यशोदा भी गोरी है, तू साँवले रंग वाला कैसे?” चुटकी देकर फुसलाकर ग्वाल-बाल मुझे नचाते हैं, फिर सब हँसते और मुसकराते हैं। तूने तो मुझे ही मारना सीखा है, दाऊ दादा को कभी डाँटती भी नहीं। “सूरदास कहते हैं मोहन के मुँह से गुस्से भरी बातें बार-बार सुनकर माता यशोदा जी अंदर-ही-अंदर ख़ुश हो रही हैं। वे कहती हैं, कान्हा! सुनो, बलराम तो चुगल-ख़ोर है, वह जन्म से ही धूर्त है।” सूरदास कहते हैं कि माता यशोदा अपने बालक श्रीकृष्ण को विश्वास भरे शब्दों में कह रही हैं कि “कृष्ण, मुझे गायों की शपथ, मैं ही तुम्हारी माता हूँ, और तुम मेरे बेटे हो।)”

व्रजवासियों को और यशोदा-नंद को बलराम से ही अधिक प्यार है, क्योंकि उनका मानना है कि बलराम के जन्म के पहले कोई भी संतान बची नहीं तो उन्होंने मन्नत मांगी कि अगर बलराम के जन्म से वह वंश आगे बढ़ेगा तो भगवती की याद में एक सोने का कड़ा उसके पांव में लगाएंगे। वैसे ही बलराम के जन्म के बाद श्रीकृष्ण भी पैदा हुआ तो वे और भी खुश हुए। इसलिए उनके मन में यह आदर का भाव था कि बलराम के कारण ही उनका वंश आगे बढ़ रहा है।

महामहिम्ना गोदादेवी अपने तिरुप्पावै ग्रंथ में यही विषय स्पष्ट करती है - शेंपोड़-क़ज़लडिच्चेल्वा बलदेवा, उंबियुं नीयुमुरंगेलोरेंबावाय्।। वेदांतदेशिक महोदय अपने दशावतार स्तोत्र में बलराम की स्तुति करते हुए कहते हैं-

फक्कत् कौरव पट्टण प्रभृतयः प्रास्त प्रलम्बादयः
तालाङ्कस्य तथाविधा विहृतयस्तन्वन्तु भद्राणि नः।
क्षीरं शकर्येव याभिरपथृग्भूताः प्रभूतैर्गुणैः
आकौमारकम् अस्वदन्त जगते कृष्णस्य ताः केलयः।।

(भगवान बलराम के विभिन्न चंचल कार्य, जिन्होंने कौरवों के राज्य को उलट दिया, जिन्होंने प्रलम्ब जैसे असुरों का वध किया, और जिनके चंचल कार्य कृष्ण के चंचल कार्यों के साथ मिल गए, जैसे चीनी दूध में मिल कर उसे और अधिक स्वादिष्ट बना देती है, हमें ऐसे परिणामों का आशीर्वाद दें जो हमेशा अच्छे हों।)

श्रीवैष्णव सिद्धांत के अनुसार यह माना जाता है कि सृष्टि के प्रारंभ में आदिशेषजी का जो अवतार है वही अवतार त्रेतायुग में लक्ष्मण स्वामी के रूप में, द्वापरयुग में बलराम जी के रूप में और कलियुग में महाभक्त रामानुजाचार्य जी के रूप में इस भूलोक में आया है।

जगन्नाथ परंपरा में, जो भारत के पूर्वी और मध्य क्षेत्रों में विशेष रूप से लोकप्रिय है, उन्हें अक्सर बलभद्र कहा जाता है। बलराम इस त्रय में से एक हैं, जिसमें बलराम को उनके भाई जगन्नाथ(कृष्ण) और बहन सुभद्रा के साथ दिखाया गया है। जगन्नाथ को सुभद्रा की अंडाकार और बलराम की अमूर्त मूर्ति की बादाम के आकार की आंखों की तुलना में उनकी गौलाकार आंखों से पहचाना जा सकता है। इसके अलावा, बलराम का चेहरा सफेद है, जगन्नाथ की मूर्ति गहरा है, और सुभद्रा की मूर्ति पीले रंग की है। तीसरा अंतर जगन्नाथ मूर्ति का सपाट सिर है, जिसकी तुलना अमूर्त बलराम के अर्धवृत्ताकार नक्काशीदार सिर से की जाती है। बलभद्र के सिर का आकार, जिसे इन क्षेत्रों में बलराम या बलदेव भी कहा जाता है, कुछ मंदिरों में कुछ हद तक सपाट और अर्धवृत्ताकार के बीच भिन्न होता है। बलराम को गोरी त्वचा वाले के रूप में दर्शाया गया है, जबकि उनके भाई कृष्ण की त्वचा काली है; संस्कृत में कृष्ण का अर्थ है काला।

भागवत पुराण में वर्णन है कि बलराम ने युद्ध में भाग लेकर यदुवंश के बचे हुए भाग का नाश कर दिया और कृष्ण को अदृश्य होते देख वे ध्यानमग्न होकर इस संसार से चले गए। महाभारत के निष्कर्षण के बाद, भगवान बलराम ने अनेक स्थलों पर यात्रा की, अपने ज्ञान और शिक्षा को फैलाया। माना जाता है कि वे आखिरकार प्रयागराज के पवित्र नगर में समाधि लिए हैं, जहां गंगा और यमुना नदी एक साथ मिलती हैं।

तुलसी माहात्म्य

- डॉ.जी.सुजाता

भारतीय संस्कृति में तुलसी को पूजनीय माना जाता है, धार्मिक महत्व होने के साथ-साथ तुलसी औषधीय गुणों से भी भरपूर है। भारतीय संस्कृति के चिर पुरातन ग्रंथ वेदों में भी तुलसी के गुणों एवं उसकी उपयोगिता का वर्णन मिलता है। तुलसी को अथर्ववेद में महा औषधि की संज्ञा दी गई है। आयुर्वेद ने तुलसी को महा औषधि, संजीवनी बूटी और तुलसी अमृत कहा है। संस्कृत में तुलसी को हरिप्रिया कहते हैं। शास्त्रानुसार तुलसी के विभिन्न प्रकार के पौधे मिलते हैं, उनमें श्रीकृष्ण तुलसी, लक्ष्मी तुलसी, राम तुलसी, भू तुलसी, नील तुलसी, श्वेत तुलसी, रक्त तुलसी, वन तुलसी, ज्ञान तुलसी मुख्य रूप से विद्यमान है।

तुलसी का पौधा प्राचीन काल से ही प्रत्येक हिन्दू परिवार में पूजा अनुष्ठान का एक अनिवार्य हिस्सा रहा है। बिना तुलसी के यज्ञ, हवन, पूजन, कर्मकांड, साधना व उपासना पूरे नहीं होते। यहाँ तक कि श्राद्ध, दान, संकल्प के साथ ही चरणामृत, प्रसाद व भगवान के भोग में तुलसी का होना अनिवार्य माना गया है। तुलसी पत्र से पूजा करने से व्रत, यज्ञ, जप, होम, हवन करने का पुण्य प्राप्त होता है।

ऐसा कहा जाता है, जिनके मृत शरीर का दहन तुलसी की लकड़ी की अग्नि से किया जाता है, वे मोक्ष को प्राप्त होते हैं, उनका पुनर्जन्म नहीं होता।

तुलसी के संबंध में अनेक पौराणिक गाथाएँ विद्यमान हैं

तुलसी (पौधा) पूर्व जन्म में एक लड़की थी, जिसका नाम वृंदा था। राक्षस कुल में जन्मी यह बच्ची बचनप से ही भगवान विष्णु की भक्त थी। जब वह बड़ी हुई तो उनका विवाह राक्षस कुल में ही दानव राजा जालंधर से संपन्न हुआ। राक्षस जालंधर समुद्र से उत्पन्न हुआ था। वृंदा बड़ी ही पतिव्रता स्त्री थी, उसकी पूजा से जालंधर को किसी युद्ध में पराजय हासिल नहीं होती थी।

एक बार देवताओं और दानवों में युद्ध हुआ। वृंदा के व्रत के प्रभाव से देवता भी जालधंर को न हरा सके। सारे देवता जब हारने लगे तो विष्णु जी के पास पहुँचे और सभी ने भगवान से प्रर्थना की। भगवान विष्णु इस बात को जानते थे कि वृंदा की भक्ति को भंग किए बिना जालंधर को परास्त करना मुमकिन नहीं है। ऐसे में उन्होंने जालंधर का रूप धारण किया और वृंदा के महल

में पहुँच गए। वृंदा ने जैसे ही अपने पति को देखा तो तुरंत पूजा में से उठ गई और उनके चरणों को छू लिया। जिसके बाद वृंदा का पतिव्रता धर्म टूट गया। जिससे जालंधर की सारी शक्तियां खत्म हो गई। देवताओं ने जालंधर का सिर काट कर अलग तक दिया। जालंधर का कटा हुआ सिर जब महल में आ गिरा तो वृंदा ने आश्चर्य से भगवान की ओर देखा, जिन्होंने जालंधर का रूप धर रखा था। वृंदा को जब उसके साथ किए गए छल का पता चला तो वृंदा भगवान श्रीहरि को श्राप देती है "जिस तरह आपने छल से मुझे वियोग का कष्ट दिया है, उसी तरह आपकी पत्नी का भी छल से हरण होगा।" साथ ही आप पत्थर के हो जाएंगे और उस पत्थर को लोग शालीग्राम के रूप में जानेंगे। कहते हैं कि वृंदा के श्राप की वजह से भगवान विष्णु दशरथ के पुत्र श्रीराम के रूप में जन्म लिया। फिर बाद में उन्हें सीता हरण के वियोग का कष्ट झेलना पड़ा।

वृंदा ऐसे बनी तुलसी

धार्मिक कथा है कि वृंदा पति के वियोग को सहन नहीं कर पाई और सती हो गई। कहा जाता है कि वृंदा की राख से जो पौधा उत्पन्न हुआ उसे भगवान विष्णु ने तुलसी का नाम दिया। जिसके बाद भगवान विष्णु ने यह प्रण लिया कि वे तुलसी के बिना भोग ग्रहण नहीं करेंगे। तभी से तुलसी की पूजा होने लगी।

तुलसी विवाह कथा

पौराणिक मान्यताओं के अनुसार कार्तिक शुक्ल पक्ष की एकादशी तिथि को भगवान विष्णु योग निद्रा से जागते हैं जिसके बाद से मांगलिक कार्यों की शुरुआत हो जाती है। भगवान विष्णु के योग निद्रा से जागने के बाद तुलसी विवाह शालिग्राम के साथ किया जाता है। मान्यता है कि जो कोई श्रद्धापूर्वक तुलसी विवाह संपन्न कराएगा उसका वैवाहिक जीवन खुशियों से भरा रहेगा।

तुलसी से जुड़ी एक और कथा बहुत प्रचलित है। श्रीमद् देवीभागवत पुराण में इनके अवतरण की दिव्य लीला कथा भी बनाई गई है। एक बार शिव ने अपने तेज को समुद्र में फेंक दिया था। उससे एक महा तेजस्वी बालक ने जन्म लिया। यह बालक आगे चलकर जालंधर के नाम से पराक्रमी दैत्य राज बना। इसकी राजधानी का नाम जालंधर नगरी था। दैत्यराज कालनेमी की कन्या वृंदा का विवाह जालंधर से हुआ। जालंधर महा राक्षस था। अपनी सत्ता के मद में चूर उसने माता लक्ष्मी को पाने की कामना से युद्ध किया, परंतु समुद्र से ही उत्पन्न होने के कारण माता लक्ष्मी ने उसे अपने भाई के रूप में स्वीकार किया। वहाँ से पराजित होकर वह देवी पार्वती को पाने की लालसा से कैलाश पर्वत पर गया। भगवान देवाधिदेव शिव का ही रूप धर कर माता पार्वती के समीप गया, परंतु माँ ने अपने योगबल से उसे तुरंत पहचान लिया तथा वहाँ से अंतर्धान हो गई।

देवी पार्वती ने क्रुद्ध होकर सारा वृत्तांत भगवान विष्णु को सुनाया। जालंधर की पत्नी वृंदा अत्यंत पतिव्रता स्त्री थी। उसी के पतिव्रता धर्म की शक्ति से जालंधर न तो मारा जाता था और न ही पराजित होता था। इसीलिए जालंधर का नाश करने के लिए वृंदा के पतिव्रता धर्म को भंग करना बहुत जरूरी था। इसी कारण भगवान विष्णु ऋषि का वेश धारण कर वन में जा पहुँचे, जहाँ वृंदा अकेली भ्रमण कर रही थीं। भगवान के साथ दो मायावी राक्षस भी थे, जिन्हें देखकर वृंदा भयभीत हो गई। ऋषि ने वृंदा के सामने पल में दोनों को भस्म कर दिया। उनकी शक्ति देखकर वृंदा ने कैलाश पर्वत पर महादेव के साथ युद्ध कर रहे अपने पति जालंधर के बारे में पूछा।

ऋषि ने अपने माजाल से दो वानर प्रकट किए। एक वानर के हाथ में जालंधर का सिर था तथा दूसरे के हाथ में धड़। अपने पति की यह दशा देखकर वृंदा

मूर्छित हो कर गिर पड़ीं। होश में आने पर उन्होंने ऋषि रूपी भगवान से विनती की कि वह उसके पति को जीवित करें। भगवान ने अपनी माया से पुनः जालंधर का सिर धड़ से जोड़ दिया, परंतु स्वयं भी वह उसी शरीर में प्रवेश कर गए। वृंदा को इस छल का ज़रा आभास न हुआ। जालंधर बने भगवान के साथ वृंदा पविव्रता का व्यवहार करने लगी, जिससे उसका सतीत्व भंग हो गया। ऐसा होते ही वृंदा का पति जालंधर युद्ध में हार गया।

इस सारी लीला का जब वृंदा को पता चला, तो उसने क्रुद्ध होकर भगवान विष्णु को शिला होने का श्राप दे दिया तथा स्वयं सती हो गई। जहाँ वृंदा भस्म हुई, वहाँ तुलसी का पौधा उगा। भगवान विष्णु ने वृंदा से कहा- हे वृंदा, तुम अपने सतीत्व के कारण मुझे लक्ष्मी से भी अधिक प्रिय हो गई हो। अब तुम तुलसी के रूप में सदा मेरे साथ रहोगी। जो मनुष्य मेरे शलिग्रम रूप के साथ तुलसी का विवाह करेगा उसे इस लोक और परलोक में विपुल यश प्राप्त होगा।

उसी दैत्य जालंधर की यह भूमि जालंधर नाम से विख्यात है। सती वृंदा का मंदिर मोहल्ला कोट किशनचंद में स्थित है। कहते हैं इस स्थान पर एक प्राचीन गुफा थी, जो सीधी हरिद्वार तक जाती थी, सच्चे मन से 40 दिन तक सती वृंदा देवी मंदिर में पूजा करने से सभी मनोरथ पूर्ण होते हैं।

सप्तगिरि ग्राहकों को सूचना

अगर कोई सप्तगिरि ग्राहक के घर का पता परिवर्तन हुई तो संबंधित समाचार सप्तगिरि कार्यालय को लेख लीखकर या ई-मेइल से सूचना देना अनिवार्य है। निम्न सूचित कार्यालय पता या ई-मेइल से समाचार दीजिए।

कार्यालय पता : प्रधान संपादक, सप्तगिरि कार्यालय, दूसरा मंजिल, ति.ति.दे. प्रेस, के.टी.रोड, तिरुपति-517 507, तिरुपति जिला (आं.प्र.) **(या)** ई-मेइल आई.डी. chiefeditortpt@gmail.com

तुलसी माता की कृपा प्राप्त करने वाली बुढ़िया माई की कहानी

कार्तिक महीने में एक बुढ़िया माई तुलसीजी को सींचती और कहती कि हे तुलसी माता! सत की दाता मैं तेरा बिडला सीचती हूँ, मुझे बहु दे, पीताम्बर की धोती दे, मीठा मीठा गास दे, वैकुंठ में वास दे, चटक की चाल दे, पटक की मोत दे, चंदन का काठ दे, रानी सा राज दे, दाल भात का भोजन दे ग्यारस की मोंत दे, कृष्ण जी का कन्धा दे।

तब तुलसी माता यह सुनकर सूखने लगी तो भगवान ने पूछा की- हे तुलसी! तुम क्यों सूख रही हो? तुलसी माता ने कहा कि एक बुढ़िया रोज आती है और यही बात कह जाती है। मैं सब बात तो पूरा कर दूँगी लेकिन कृष्ण का कन्धा कहा से लाऊँगी। तो भगवान बोले जब वो मरेगी तो मैं अपने आप कंधा दे आऊगा। तू बुढ़िया माई से कह देना।

बाद में बुढ़िया माई मर गई। सब लोग आ गये। जब माई को ले जाने लगे तो वह किसी से न उठी। तब भगवान एक बारह बरस के बालक का रूप धारण करके आये।

बालक ने कहा, मैं कान में एक बात कहूँगा तो बुढिया माई उठ जाएगी। बालक ने कान में कहा, बुढिया माई मन की निकाल ले, पीताम्बर की धोती ले, मीठा मीठा गास ले, वैकुंठ का वास ले, चटक की चल ले, पटक की मोत ले, कृष्णा जी का कन्धा ले। यह सुनकर बुढिया माई हल्की हो गई। भगवान ने कन्धा दिया और बुढिया माई को मुक्ति मिल गई।

श्री गणेश जी को वर्जित है तुलसी चढ़ाना

जो तुलसी भगवान विष्णु को अत्यंत प्रिय है, वही तुलसी भगवान गणेश को अप्रिय है, इतनी अप्रिय की भगवान गणेश के पूजन में इसका प्रयोग वर्जित है। पर ऐसा क्यों है इसके सम्बन्ध में एक पौराणिक कथा है- एक बार श्री गणेश गंगा किनारे तप कर रहे थे। इसी कालावधि में धर्मात्मज की नवयौवना कन्या तुलसी ने विवाह की इच्छा लेकर तीर्थ यात्रा पर प्रस्थान किया। देवी तुलसी सभी तीर्थस्थलों का भ्रमण करते हुए गंगा के तट पर पहुँची। गंगा तट पर देवी तुलसी ने युवा तरुण गणेश जी को देखा जो तपस्या में विलीन थे। शास्त्रों के अनुसार तपस्या में विलीन गणेश जी रत्न जटित सिंहासन पर विराजमान थे। उनके समस्त आंगों पर चंदन लगा हुआ था। उनके गले में पारिजात पुष्पों के साथ स्वर्ण-मणि रत्नों के अनेक हार पड़े थे। उनके कमर में अत्यन्त कोमल रेशम का पीताम्बर लिपटा हुआ था। तुलसी श्री गणेश के रूप पर मोहित हो गई और उनके मन में गणेश से विवाह करने की इच्छा जाग्रत हुई। तुलसी ने विवाह की इच्छा से उनका ध्यान भंग किया। तब भगवान श्री गणेश ने तुलसी द्वारा तप भंग करने को अशुभ बताया और तुलसी की मंशा जानकर स्वयं को ब्रह्मचारी बताकर उसे विवाह प्रस्ताव को नकार दिया।

श्री गणेश द्वारा अपने विवाह प्रस्ताव को अस्वीकार कर देने से देवी तुलसी बहुत दुखी हुई और आवेश में आकर उन्होंने श्री गणेश के दो विवाह होने का शाप दे दिया। इस पर श्री गणेश ने भी तुलसी को शाप दे दिया कि तुम्हारा विवाह एक असुर से होगा। एक राक्षस की पत्नी होने का शाप सुनकर तुलसी ने श्री गणेश से माफी मांगी। तब श्री गणेश ने तुलसी से कहा कि तुम्हारा विवाह शंखचूर्ण राक्षस से होगा। किंतु फिर तुम भगवान विष्णु और श्रीकृष्ण को प्रिय होने के साथ ही कलियुग में जागृत के लिए जीवन और मोक्ष देने वाली होगी। पर मेरी पूजा में तुलसी चढ़ाना शुभ नहीं माना जाएगा। तब से ही भगवान श्री गणेश जी की कुछ विशेष पूजा कैंकर्यों के अलावा बाकी दिनों में तुलसी वर्जित मानी जाती है।

तुलसी के फायदे

तुलसी एक औषधीय पौधा है। आयुर्वेद में भी तुलसी के गुणों का उल्लेख विस्तार से मिलता है। तुलसी के पौधे का हर हिस्सा गुणकारी है। तुलसी की पत्तियों का उपयोग ज्यादा किया जाता है जबकि आयुर्वेद में तुलसी के बीजों और फूलों के फायदों के बारे में भी बताया गया है। इसका उपयोग सर्दी-जुकाम, खांसी, दंत रोग और श्वास संबंधी रोग के लिए बहुत ही फायदेमंद माना जाता है। तुलसी विटामिन और खनिज का भंडार है। इसमें मुख्य रूप से विटामिन सी, कैल्शियम, जिंक, आयरन और क्लोरोफिल पाया जाता है, जो विभिन्न रोगों के रोकथाम के लिए भी उपयोगी है। रोजाना तुलसी का सेवन करने से शरीर में रोगों से लड़ने की क्षमता बढ़ती है और सर्दी-खांसी जैसी बीमारियों से बचाव होता है।

श्री वादिराजतीर्थ

- डॉ.मैथिली प्र.राव

श्री वादिराज तीर्थ को मध्वाचार्य परम्परा के संतों की श्रेणी में बहुत उन्नत स्थान प्राप्त है। कर्नाटक के हरिदास परंपरा के श्रेष्ठतम भक्तों एवं विद्वानों में एक, श्री वादिराजतीर्थ का जन्म सन् 1480 में कर्नाटक के कुंदापुर तालुक के हुविनकेरे नामक स्थान में हुआ था। उनके जन्म से संबंधित बहुत रोचक संदर्भ है। भूवराह के नाम से उनका नामकरण किया गया। आठ वर्ष की उम्र में श्री वागीश तीर्थ ने इन्हें अपने शिष्य के रूप में स्वीकार किया। इसके बाद उन्होंने अपने गुरु की आराधना भव्य तरीके से की और अपने अनुयायियों के साथ श्री व्यास तीर्थ के अधीन अध्ययन करने के लिए हम्पी चले गए। राजा कृष्णदेवराय वादिराज के व्यक्तित्व से प्रभावित हुए और उन्हें 'प्रसंगभरण तीर्थ (वक्ता का रत्न)' की उपाधि दी। कुछ वर्षों के बाद वादिराज उडुपी वापस लौट आए। विदा के उपहार के रूप में व्यास तीर्थ ने उन्हें 'व्यास मुष्टि' प्रदान की, जिसे उडुपी यात्रा के दौरान उन्हें उपहार के रूप में दिया गया था।

व्यक्तित्व की विशिष्टता :

अन्य संतों की अपेक्षा श्री वादिराज के व्यक्तित्व एवं उपलब्धियों में कुछ विशेष संगतियाँ हैं।

वे एक महान विद्वान, वादक, लेखक, कवि थे जो कन्नड, तुलु और संस्कृत भाषाओं में पारंगत थे।

ऐसा प्रतीत होता है कि वादिराज ने केलडी के नायकों को प्रभावित किया था क्योंकि वादिराज के उत्तराधिकारी वेदवेद्य तीर्थ को केलडी वेंकटप्पा नायक से गाँवों का अनुदान मिला था।

1512 में, वादिराज ने लगभग दो दशकों तक भारत की यात्रा की, जो अपने आप में उस समय एक कष्ट साध्य कार्य था। ऐसी मान्यता है कि इन यात्राओं के दौरान उन्होंने अनेक चमत्कार दिखाए जैसे मृतकों को पुनर्जीवित करना और राक्षसों को भगाना। कुछ परंपरागत कथाओं में गुप्तविद्या में उनकी विशेषज्ञता और अन्नाप्पा या भूतराजा नामक एक जंगल की आत्मा को वश में करने की एक घटना की बात करते हैं। ऐसा कहा जाता है कि जब वे तिरुमल गए थे, तो उन्हें पूरी पहाड़ी शालिग्राम की तरह लगी थी। उस पवित्र पहाड़ी पर पैर नहीं रखना चाहते थे, इसलिए घुटनों के बल उन्होंने चढाई की। उन्होंने भगवान श्रीनिवास को शालिग्राम की माला भेंट की। उन्होंने अयोध्या से श्री मुख्यप्राण की प्रतिमा प्राप्त की और उसे उडुपी में स्थापित किया। उन्होंने श्री मध्वाचार्य की एक प्रतिमा भी उनके जन्म स्थान पजका में स्थापित की। इसके अतिरिक्त, उडुपी में मंदिर परिसर का जीर्णोद्धार किया और पूजा की पर्याय प्रणाली की

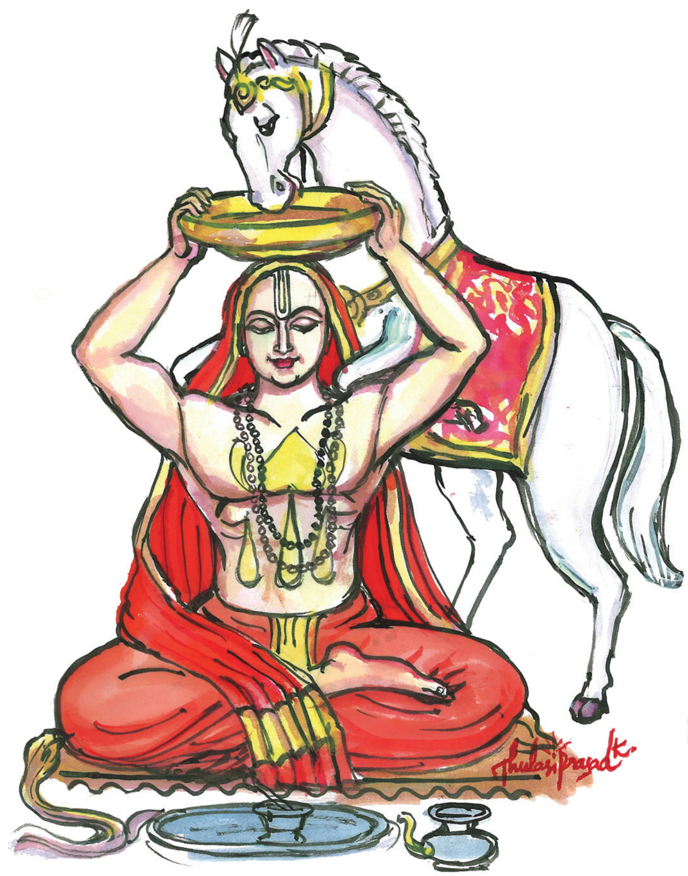

स्थापना की। और सोधे मठ के पुजारी के रूप में, ऐसा कहा जाता है कि श्री वादिराज ने अपनी दिव्य शक्ति से हम्पी में विजयनगर के राजा को वालि का खजाना दिखाया था। मिले विशाल खजाने में से, वह केवल दो मूर्तियाँ विट्ठल और राम ले गए, जिनकी पूजा आज भी सोंदा/सोदे मठ में की जाती है।

श्री वादिराज को मूडबिद्री और करकला में जैन विद्वानों से शास्त्रार्थ करने और सुनार समुदाय के एक संप्रदाय को द्वैत पंथ में परिवर्तित करने का श्रेय प्राप्त है। लगभग उसी समय उन्होंने उडुपी में मंदिर के संगठन का पुनर्गठन किया, मंदिर के चारों ओर अष्ट मठों की स्थापना की और मंदिर का जीर्णोद्धार किया। उनके द्वारा शुरू किए गए धार्मिक सुधार आज भी कायम हैं। वे 120 साल तक जीवित रहे जिसमें से 112 वर्ष उन्होंने संन्यासी के रूप में बिताए और सबसे विशेष विषय यह है कि उन्होंने जीवित अवस्था में ही बृन्दावन में प्रवेश किया जो यति परंपरा में सिर्फ़ श्री राघवेंद्र स्वामी ने किया है! उनका बृंदावन सोदे मठ में स्थित है।

तटीय प्रदेश के सुनारों का उद्धार :

कर्नाटक के तटीय क्षेत्रों में हज़ारों सुनार रहते थे। ये सुनार अपनी निम्न सामाजिक स्थिति और धार्मिक समुदाय में अस्वीकृति से व्यथित थे। एक बार, एक सुनार ने गणपति की मूर्ति बनाने के इरादे से 5 धातुओं के मिश्र धातु को पिघलाया और उसे सांचे में डाला। जब उसने सांचे को खोला तो उसे घोड़े के सिर और चार भुजाओं वाली हयग्रीव की मूर्ति देखकर आश्चर्य हुआ। एक और आश्चर्यजनक पहलू यह था कि मूर्ति अभी भी लाल और प्रकाशमान थी। उसने इसे नष्ट करके अगले दिन धातु का फिर से उपयोग करने का फैसला किया। लेकिन उस रात को, उसके सपने में मूर्ति को वादिराज जी को सौंपने का निर्देश मिला। वादिराज ने भी एक सपना देखा जिसमें उन्हें बताया गया कि उन्हें एक विशेष हयग्रीव मूर्ति मिलेगी। वादिराज जी बहुत प्रसन्न हो गए क्योंकि हयग्रीव उनके इष्ट देवता थे।

अगले दिन सुनारों का एक प्रतिनिधिमंडल ने वादिराज जी को वह मूर्ति सौंप दी। तभी उन्होंने वादिराज जी से समाज से बहिष्कृत होने के अपने दुःख को साझा किया। वादिराज ने उन पर दया की और उनका उद्धार करने का फैसला किया।

तदनुसार, एक उपयुक्त अवसर पर, स्वर्णकारों के पूरे समुदाय को चक्रांकण प्रदान किया गया और भागवत (द्वैत) धर्म के अंतर्गत लाया गया। तब से, उस समुदाय के सदस्य (दैवज्ञ ब्राह्मण) वादिराज को अपना गुरु और सोदे मठ को अपना मठ मानते हैं।

कुछ इसी प्रकार से वादिराज ने कोटेश्वर ब्राह्मणों को भी द्वैत संप्रदाय में शामिल किया, जिससे उन्हें समाज में प्रतिष्ठा और सम्मान मिला।

साहित्यिक अवदान :

एक द्वैत दार्शनिक, कवि, यात्री और रहस्यवादी श्री वादिराज ने मध्वाचार्य के धर्मशास्त्र और तत्वमीमांसा पर कई आलोचनात्मक टिप्पणियां लिखीं। उन्होंने कई कविताओं की रचना की। मध्वाचार्य की रचनाओं का कन्नड़ में अनुवाद करके उस समय के कन्नड़ साहित्य को भी समृद्ध किया। अपने महत्वपूर्ण योगदान द्वारा हरिदास आंदोलन को प्रोत्साहन दिया। उन्होंने अपनी रचनाओं के माध्यम से कर्नाटक और हिंदुस्तानी संगीत दोनों को प्रभावित किया है। उनकी रचनाएँ मुख्य रूप से कन्नड़ और संस्कृत में हैं। उनकी मुद्रा 'हयवदन' है। उनकी रचनाएँ उनके काव्यात्मक उत्कर्ष, बुद्धि और हास्य को उद्घाटित करती हैं। लगभग दो दशकों तक उन्होंने भारत की जो यात्रायें की थीं, उन पर आधारित 'तीर्थ प्रबंध' नामक एक यात्रा वृत्तांत भी लिखा।

एक बार पुणे में चातुर्मास व्यतीत करते समय उन्होंने 19 दिनों में 'रुक्मिणीश-विजय' नामक महाकाव्य संस्कृत में लिखा। तत्त्ववाद के सभी सिद्धांतों का पूर्ण अनुपालन करते हुए, काव्यात्मक सौंदर्य से समझौता किए बिना लिखा गया यह काव्य एक कविता और शास्त्र दोनों पर आधारित एक ग्रंथ है। इसके काव्यात्मक सौंदर्य से अभिभूत होकर वहाँ के विद्वानों ने इसे संस्कृत साहित्य में सबसे महान महाकाव्य घोषित करने में कोई संकोच नहीं किया और पांडुलिपि को बहुत धूमधाम और गौरव के साथ एक सुसज्जित हाथी पर शहर के चारों ओर जुलूस में ले जाया गया।

इसी प्रकार, पंढरपुर से वापसी के रास्ते में, श्री वादिराज ने 'दशावतार स्तुति' की रचना की। यह अश्वधाति (शाब्दिक रूप से 'घोडे की चाल या दुलकी चाल') पर आधारित है और जब इसे मधुरता से गाया जाता है तो ऐसा लगता है जैसे घोड़ा नाच रहा हो।

श्री वादिराज की साहित्यिक विशेषता यह है कि दास साहित्य और व्यास साहित्य में उन्होंने समान रूप से योगदान दिया है। उनके इष्ट देव का अंकित नाम "हयवदन" है। उन्होंने उडुपी में कृष्ण पूजा के दौरान कन्नड़ कीर्तन गायन की प्रथा का प्रारंभ किया। "लकुमी नारायण जया - लकुमी नारायण" उनकी सबसे महान रचनाओं में से एक है, जिसे आज भी अधिकांश मध्व मठों में गाया जाता है। उन्होंने तुलु भाषा में कीर्तन की रचना भी की। उनके द्वारा रचित कीर्तन में से एक बहुत ही अनोखा है। इसमें 6 छंद हैं और प्रत्येक छंद अलग-अलग भाषा (कन्नड़, तुलु, तमिल, तेलुगु, मराठी और हिंदी) में है। दूसरी उत्कृष्ट कृति "लक्ष्मी शोभने" की रचना है, जिसे आज भी मध्व समुदाय के सभी विवाहों में गाया जाता है।

लगभग 20 स्वतंत्र ग्रंथ, 7 टीकाग्रंथ, 5 काव्य, 13 स्तोत्र ग्रंथ, 5 टिप्पणी ग्रंथ तथा कन्नड, संस्कृत एवं तुलु भाषाओं में अनेक स्तोत्रों की रचना के माध्यम से सिर्फ दार्शनिक साहित्य ही नहीं इन सभी भाषाओं के साहित्य को भी समृद्ध किया है।

चित्र का विवरण :

अपने प्रिय देवता भगवान हयग्रीव (जिन्हें हयवदन भी कहा जाता है) को श्री वादिराज एक विशेष विधि से नैवेद्य अर्पित करते थे। इस आलेख के साथ संलग्न चित्र उसी को चित्रित करता है जो वादिराज को दर्शाने वाले चित्रों में से सबसे लोकप्रिय है। हयग्रीव नामक वह मीठा व्यंजन गुड़, बादाम, घी और पके हुए चने से बनता था। पूजा की समाप्ति के पश्चात श्री वादिराज एक कमरे में अपने आप को बंद करके, अपने सिर पर इस व्यंजन को रखकर हयग्रीव को समर्पित करते थे। प्रसाद के रूप में भगवान थोडा सा छोड दिया करती थे। कुछ लोगों को इस पर विश्वास नहीं था इसलिए एक बार इस बात की परीक्षा करते हुए उन्होंने उसमें हल्का सा विष मिलाया।

उस दिन भगवान ने कुछ भी नहीं छोडा। और तो और वो हल्के नीले-हरे रंग के हो गए। उन्होंने श्री वादिराज को यह बात बताई। तदनंतर अगले कई दिनों तक श्री वादिराज ने 'मटटु गुल्ला' नामक एक विशेष नैवेद्य समर्पित किया जिससे गले के स्थान को छोडकर पूरा शरीर फ़िर से श्वेत हो गया।

इस प्रकार के अनेक चमत्कारी एवं अद्भुत प्रसंग उनके व्यक्तित्व की विशिष्टता को निरंतर उद्घाटित करते रहते हैं। आज भी श्री वादिराज अपने भक्तों का मार्गदर्शन करते हुए उन्हें अपने आशीर्वाद से अनुगृहीत करते हैं। धर्म, समाज, समुदाय, परंपरा, साहित्य आदि सभी दृष्टिकोणों से अपना अमूल्य योगदान देने वाले श्री वादिराज जी का यति परंपरा में एक विशिष्ट स्थान है।

(आयुर्वेद)

नींबू

- डॉ.सुमा जोषि

पौराणिक और ऐतिहासिक पृष्ठभूमि

भारत में पौराणिक पृष्ठभूमि

नींबू का उल्लेख प्राचीन भारतीय ग्रंथों और लोक कथाओं में मिलता है। इसे शुद्धता और रोगों से रक्षा करनेवाला फल माना गया है। हिंन्दू धार्मिक संस्कारों में नींबू का उपयोग बुरी नजर और नकारात्मक ऊर्जा से बचाव के लिए किया जाता है। नींबू को दुर्गा माँ और हनुमान जी के साथ भी जोड़ा जाता है।

विश्व भर की पौराणिक पृष्ठभूमि

नींबू का उपयोग प्राचीन मिस्र, रोम, ग्रीस और चीन में भी हुआ। मिस्रियों ने इसे स्वास्थ्यवर्धक माना, जबकि ग्रीस में इसे सुंदरता और स्वास्थ्य के लिए आवश्यक फल माना गया। चीन में नींबू को चिकित्सा और धार्मिक अनुष्ठानों में उपयोग किया गया।

ऐतिहासिक पृष्ठभूमि

नींबू का इतिहास लगभग 2000-3000 वर्ष पुराना माना जाता है। भारत और पूर्वी एशिया के क्षेत्रों में इसका प्रयोग शुरू हुआ। व्यापार मार्गों के जरिए नींबू मध्य पूर्व, यूरोप और आफ्रिका में पहुँचा। अंग्रेजों ने इसे भारत में व्यापक रूप से उगाना शुरू किया।

वर्गीकरण

परिवार : Rutaceae (खट्टे फल परिवार)

वर्ग : Citrus (साइट्रस)

प्रजाति : Citrus limon

वैज्ञानिक नाम : Citrus limon (L.) Burm. f.

वनस्पति विवरण

नींबू एक सदाबहार पेड़ होता है जिसकी ऊँचाई 3 से 6 मीटर एक होती है। इसके पत्ते गहरे हरे रंग के, अंडाकार और चिकने होते हैं। फूल सफेद रंग के छोटे-छोटे होते हैं, जो सुगंधित होते हैं। फल पीले रंग का, गोलाकार या अंडाकार होता है जिसमें खट्टा रस भरा होता है। नींबू के तने में कांटे होते हैं।

नींबू की खेती

नींबू का पेड़ गर्म और उमस वाले क्षेत्रों में अच्छी तरह उगता है। इसकी खेती अच्छी जल निकासी वाले, दोमट मिट्टी में की जाती है। मौसम गर्म और सूखा हो तो बेहतर उत्पादन होता है। नींबू के पौधों को नियमित रूप से पानी, उर्वरक और कीट नियंत्रण की आवश्यकता होती है।

रासायनिक संरचना

नींबू में मुख्य रूप से विटामिन C, साइट्रिक एसिड, फाइटोकेमिकल्स, फ्लेवोनोइड्स, पेक्टिन और एंजाइम पाए जाते हैं। नींबू का रस अम्लीय होता है, जिसमें साइट्रिक एसिड लगभग 5-6% होता है। इसके अलावा इसमें कैल्शियम, मैग्नीशियम और पोटैशियम भी होते हैं।

आयुर्वेदिक दृष्टिकोण (Ayurvedic Explanation)

आयुर्वेद में नींबू को "मधुर, कटु और अम्ल रस" वाला फल माना गया है। यह वात और कफ दोष को संतुलित करता है तथा पित्त को बढ़ाता है। नींबू पाचन शक्ति बढ़ाने वाला, शरीर को डिटॉक्स करने वाला और वात-शामक फल है। इसे आमतौर पर ज्वर, अम्लपित्त, पाचन दोष और स्किन समस्याओं में प्रयोग किया जाता है।

नींबू के स्वास्थ्य लाभ और उनका उपयोग

इम्यूनिटी बढ़ाना : नींबू में विटामिन C भरपूर होता है जो शरीर की रोग-प्रतिरोधक क्षमता को बढ़ाता है।

पाचन सुधारना : भोजन से पहले नींबू पानी पीना लाभकारी होता है। नींबू पाचन तंत्र को दुरुस्त करता है और अपच, गैस की समस्या को कम करता है।

त्वचा के लिए फायदेमंद : नींबू का रस चेहरे पर हल्के से लगाएँ या नींबू पानी से धोएँ। नींबू त्वचा को साफ और चमकदार बनाता है। यह दाग-धब्बे कम करता है।

बालों की देखभाल : नींबू का रस नारियल तेल में मिलाकर सिर की मालिश करें। नींबू बालों को मजबूत करता है और रूसी दूर करता है।

सर्दी और खांसी में राहत : गर्म पानी में नींबू और शहद मिलाकर पिएँ। नींबू गले की खराश और खांसी में आराम देता है।

भोजन के बाद नींबू पानी पिएँ। नींबू मधुमेह में रक्त शर्करा को नियंत्रित करता है।

डिटॉक्सिफिकेशन : सुबह खाली पेट नींबू पानी पीना चाहिए। नींबू शरीर से विषैले पदार्थ निकालता है।

मुँह की बदबू दूर करना : नींबू के रस से मुँह कुल्ला करें। नींबू मुँह की दुर्गंध को दूर करता है।

जोड़ों के दर्द में राहत : नींबू पानी पीएँ और प्रभावित स्थान पर नींबू का रस लगाएँ। नींबू में सूजन कम करने वाले गुण होते हैं। नींबू खून को साफ करता है।

मासिक धर्म में आराम : नींबू पानी या नींबू शहद के साथ पिएँ। नींबू मासिक दर्द को कम करता है।

डिहाइड्रेशन से बचाव : गर्मी में नींबू पानी का सेवन करें। नींबू पानी शरीर को हाइड्रेट रखता है।

स्किन इंफेक्शन में उपयोगी : प्रभावित क्षेत्र पर नींबू का रस लगाएँ। नींबू संक्रमण को कम करता है।

नींद सुधारना : नींबू की खुशबू वाले तेल का उपयोग करें। नींबू की खुशबू नींद लाने में मदद करती है।

आंखों की रोशनी बढ़ाना : नींबू विटामिन C से भरपूर है जो आंखों के लिए अच्छा है।

कैंसर से बचाव : नींबू में एंटीऑक्सिडेंट्स होते हैं जो कैंसर से लड़ने में मदद करते हैं।

दिल की सेहत के लिए : रोजाना नींबू पानी और संतुलित आहार लें। नींबू रक्त परिसंचरण सुधारता है और दिल को स्वस्थ रखता है।

मुँहासे और दाग-धब्बे कम करना : नींबू रस को प्रभावित जगह पर हल्के से लगाएँ। नींबू त्वचा के दाग-धब्बे हल्के करता है।

उच्च कोलेस्ट्रॉल कम करना : रोजाना नींबू पानी लें। नींबू शरीर से खराब कोलेस्ट्रॉल को कम करता है।

किडनी स्टोन में राहत : नींबू शरीर में कैल्शियम के क्रिस्टल बनने से रोकता है।

मूत्र संबंधी संक्रमण में मदद : दिनभर नींबू पानी पीना लाभकारी। नींबू मूत्र प्रणाली को साफ करता है।

त्वचा के रोगों में उपयोग : नींबू रस को पानी में मिलाकर त्वचा पर लगाएँ। नींबू त्वचा की खुजली और जलन में राहत देता है।

आंतों की कीड़ों को निकालना : नींबू में कीटाणु नाशक गुण होते हैं।

बाल झड़ने में कमी : नींबू का रस बालों की जड़ों में लगाएँ। नींबू बालों को मजबूत बनाकर झड़ने से बचाता है।

एलर्जी कम करना : नींबू पानी पीएं और नींबू का रस त्वचा पर लगाएं। नींबू में विरोधी एलर्जी गुण होते हैं।

आंखों की थकान कम करना : नींबू रस और गुलाब जल मिलाकर आंखों के आस-पास लगाएँ। नींबू आंखों को राहत देता है।

शरीर को ऊर्जा देना : नींबू पानी और शहद मिलाकर पीएँ। नींबू शरीर में ताजगी और ऊर्जा लाता है।

खून की कमी में मदद : नींबू आयरन अवशोषण बढ़ाकर खून की कमी को दूर करता है।

मसूड़ों की बीमारी में लाभकारी : नींबू मसूड़ों को स्वस्थ रखता है। नींबू रस से मसूड़ों की मालिश करें।

तनाव और डिप्रेशन में राहत : नींबू की खुशबू मन को शांति देती है। नींबू तेल की खुशबू लें।

व्रण और घाव जल्दी भरना : नींबू संक्रमण को रोकता है और घाव भरने में मदद करता है। नींबू रस को घाव पर हल्के से लगाएँ।

फंगल संक्रमण में उपयोगी : प्रभावित क्षेत्र पर नींबू रस लगाएँ।

नींबू से बने बाजार में मिलने वाले मुख्य उत्पाद और उनके उपयोग

नींबू रस, नींबू पाउडर, नींबू तेल (Lemon Essential Oil), नींबू के छिलकों से बने उत्पाद, नींबू आधारित स्किनकेयर प्रोडक्ट्स, नींबू सॉफ्ट ड्रिंक (Lemonade), नींबू के अर्क (Lemon Extract),नींबू की गोलियाँ (Lemon Candy), नींबू की साबुन और शैम्पू, नींबू के अचार और चटनी।

नींबू के अत्यधिक सेवन के दुष्प्रभाव (Side effects of excess use of Lemon)

1. अधिक नींबू का सेवन करने से नींबू में मौजूद एसिड दांतों की परत (इनेमल) को कमजोर कर सकता है, जिससे दांत sensitive हो सकते हैं और दांतों में छेद (कैविटी) बन सकते हैं।

2. नींबू में अधिक मात्रा में साइट्रिक एसिड होता है, जो पेट में अम्लीयता बढ़ा सकता है। इससे पेट में जलन, एसिड रिफ्लक्स, हार्टबर्न या गैस की समस्या हो सकती है।

3. अगर पेट में पहले से अल्सर या गैस की समस्या हो तो नींबू का अधिक सेवन करने से यह स्थिति और बिगड़ सकती है।

4. नींबू का रस सीधे त्वचा पर लगाने से कुछ लोगों को जलन, खुजली या एलर्जी हो सकती है, खासकर यदि इसके बाद धूप में जाना पड़े तो सनबर्न (धूप से जलना) की समस्या हो सकती है।

5. नींबू के अत्यधिक उपयोग से मसूड़ों में सूजन या जलन हो सकती है।

6. नींबू का अत्यधिक सेवन मूत्र पथ में जलन या असुविधा पैदा कर सकता है।

7. अत्यधिक नींबू का सेवन गर्भवती महिलाओं में एसिडिटी और पेट की समस्याएँ बढ़ा सकता है, इसलिए सावधानी आवश्यक है।

निष्कर्ष

नींबू सेहत के लिए बहुत फायदेमंद है, लेकिन इसका सेवन संतुलित मात्रा में ही करना चाहिए। अधिक मात्रा में लेने से ऊपर बताए दुष्प्रभाव हो सकते हैं। अगर किसी को कोई समस्या हो तो नींबू का सेवन बंद कर डॉक्टर से सलाह लें।

अगस्त महीने का राशिफल

- डॉ.केशव मिश्र

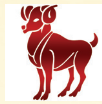

मेष राशि - अपने वाणी व्यवहार को नियन्त्रण में रखें क्रोध एवं उत्तेजना से कोई बना हुआ कार्य बिगड़ सकता है। नौकरी, व्यवसाय की स्थिति अनुकूल रहेगी। संयमशील व्यवहार से पूर्व किए हुए कार्य प्रयासों से सफलता मिलेगी। विपरीत स्थितियों में क्रमशः सुधार होगा। कार्यों में सकारात्मक प्रगति, विरोधियों पर दबाव, सुव्यवस्थित दिनचर्या, वाहन सुख व दाम्पत्य सुख, गृह-भूमि, कृषि कार्यों में प्रगति होगी।

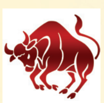

वृषभ राशि - अनावश्यक भागदौड़ और फिजूलखर्ची अधिक होगी। स्वास्थ्य उत्तम होते हुये भी तनाव-विवाद, आर्थिक गतिरोध की चिन्ता बढ़ेगी। किसी से बिना झंझट के तनाव बना रहेगा, संतान कष्ट, शैक्षणिक गतिरोध, यात्रा व्यथा, व्यवसायिक क्षेत्रों में अनेक उतार-चढ़ाव रहेंगे और कार्यशैली में परिवर्तन से लाभ के अवसर बढ़ेंगे। राजकीय समस्याओं का समाधान।

मिथुन राशि - बुध द्वितीय भाव में अस्तगत रहेगा। मान-यश-प्रभाव का विस्तार, आरोग्य सुख, रचनात्मक कामों में प्रगति, भ्रातृ सुख, राजकीय सहयोग, प्रेम सम्बन्धों में प्रगाढ़ता, रोजी-रोजगार में अनुकूलता रहेगी। लेन-देन के कार्यों में परेशानी एवं खर्च भी बढ़-चढ़ कर होंगे।

कर्कटक राशि - अपने सगे-सम्बन्धि, भाई-बन्धुओं से मनमुटाव, वाद-विवाद, व्यवस्थित दिनचर्या, विद्या-बुद्धि का विकास, दाम्पत्य सौहार्द्र, भूमि-वाहन सुख, रोजी रोजगार में सफलता। सुख-साधनों पर बुध-शुक्र का संचार होने से मानसिक कष्ट, उत्तेजना, क्रोध अधिक तथा स्वास्थ्य परेशानी रहेगा।

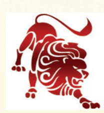

सिंह राशि - मास के पूर्वार्ध में ग्रहों का परिवर्तन सकारात्मक पक्ष को मजबूत करेगा। गृह भूमि, कृषि कार्यों में प्रगति, समस्याओं का समाधान, कौटुम्बिक सुख, आर्थिक विकास, व्यापारिक सफलता, उत्तरार्ध में शनि मंगल परेशानियाँ बढ़ायेगा।

कन्या राशि - मंगल इस राशि पर तथा बुध लाभ स्थान में होने से कार्यक्षेत्र में महत्त्वपूर्ण लोगों के साथ सम्पर्क बढ़ेंगे। स्वास्थ्य सामान्य, निरर्थक तनाव-विवाद से कष्ट, प्रतियोगी क्षेत्र में श्रमसाध्य सफलता, विरोधियों पर दबाव, आर्थिक संतुलन, कौटुम्बिक सुख, विद्या-बुद्धि का विकास, प्रियजनों से भेंट, व्यापार में लाभ, स्वास्थ्य चिन्ता, व्यय, आर्थिक सन्तुलन।

तुला राशि - पूर्वार्ध में लाभ के अवसरों का उचित मूल्यांकन नहीं कर पायेंगे। मित्रों का सहयोग, रचनात्मक कार्यों में रुचि, उद्योग-व्यापार में प्रगति, गृह-भूमि, कृषि कार्यों में श्रमपूर्ण सफलता मिलेगी। उत्तरार्ध में सकारात्मक परिवर्तन होंगे। विपरीत स्थितियों में क्रमशः सुधार, यात्रा। शुक्र भाग्यस्थ होने से विशेष संघर्ष एवं परिश्रम से ही आय के साधनों में वृद्धि होगी।

वृश्चिक राशि - पूर्व परिस्थितियाँ धीरे-धीरे अनुकूल होंगी। शुभविचारों का उदय, रोगमुक्ति, घरेलू सुख, आर्थिक विकास, सम्मान लाभ, इष्ट मित्रों का सहयोग, पठन-पाठनों में रुचि, सामाजिक संलग्नता, व्यापार में लाभ, उत्तरार्ध में ग्रहों का परिवर्तन शुभ प्रभावी रहेगी। शत्रु विजय, अभीष्ट सिद्धि, उद्योग में सफलता।

धनुष राशि - गुरु की दृष्टि होने के कारण धन लाभ व उन्नति के मार्ग प्रशस्त होंगे। हर्षोल्लासपूर्ण वातावरण, व्यावहारिक जीवन में कठोरता, इष्टमित्र-स्त्री-संतान कुटुम्ब से प्रसन्नता, अभीष्ट कार्यसिद्धि, स्वास्थ्य उत्तम, आर्थिक संतुलन, सश्रम व्यापारिक विस्तार, छात्रों के लिए अनुकूल समय।

मकर राशि - वाणी-व्यवहार को नियंत्रित रखने से अनेक कार्य सिद्ध होंगे। स्वास्थ्य सामान्य, श्रमपूर्ण-सीमित सफलता, सामाजिक-राजनीतिक लोगों में उल्लास, बुध-शुक्र का परिवर्तन्त उत्साह वर्धक होगा। शनि तृतीयस्थ होने से यद्यपि गत किए गए प्रयासों में लाभ व उन्नति के अवसर मिलेंगे।

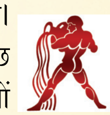

कुंभ राशि - आशाओं में किंचित सफलता प्राप्त होगी। शनि द्वितीयस्थ होने से धन लाभ व उन्नति के कुछ अवसर प्राप्त होंगे। परन्तु कर्कस्थ मंगल अनेक उलझनों को जन्म देगा। अनावश्यक तनाव विवाद से परेशानी, स्वास्थ्य सामान्य, आर्थिक संतुलन, संतान सुख, रोजी-रोजगार में अनुकूलता रेहगी।

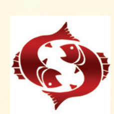

मीन राशि - भाग्येश मंगल की लग्नस्थ शनि पर दृष्टि रहने से विद्या एवं कैरियर सम्बन्धी विघ्न-बाधाएँ एवं कुछ असमंजस के हालात बनेंगे। स्वास्थ्य चिन्ता, पारिवारिक दायित्व निर्वहन में सहजता, इष्ट मित्रों का सहयोग, रोजगार की चिन्ता, सामाजिक-राजनीतिक लोगों को परेशानी। द्वादशस्थ राहु पर गुरु की दृष्टि रहने से भाग्यवश ही हालात में सुधार एवं शुभ कार्यों पर धन का खर्च अधिक होगा।

चित्रकथा

प्रथम पूजा आराध्य दैव श्री गणेश

तेलुगु मूल - 'कलारत्न' डॉ.के.रविचंद्रन
अनुवादक - डॉ.एम.रजनी
चित्रकार - श्री तुंबलि शिवाजी

दूर से गणपति एक ब्रह्मचारी के रूप में दिखाई दिया।
बेटा मेरे लिए एक उपकार (मदद) करोगे? सूर्यस्त हो रहा है। संध्या वंदन करके आऊँगा। तब तक इस ज्योतिर्लिंग को पकड कर रखो।
इस भाग्य के लिए मुझ से क्या काम? उसे चबूतर पर रखकर संध्या वंदन करो।
ऐस नहीं होगा? और कोई राह नहीं है उसे तो हाथ में ही थामना है।
ठीक है दे दो..... बाप रे! यह लिंग बहुत भारी हैं।
हाय! मैं जितना भारी उठा सकता उतना ही वहन करुँगा। यदि वहन कर पाना संभव न हो तो मैं तीन बार पुकारुँगा यदि तत्काल सहायता नहीं मिली तो उस लिंग की जिम्मेदारी मेरा नहीं होगा।
पुकारते ही आजाऊँगा।
रावणा! अरे ओ रावणा!
तीसरी बार बुला रहा हूँ।.... रा... व.....णा....!
शिवलिंग को जमीन पर रख दिया।
बालक तुम मेरे लिए विघ्नेश्वर बन गये। आत्मलिंग को जमीन पर रख दिया।
रावणा! गणपति को प्रथम पूजा न करने के कारण यह सब कुछ हुआ। देवों ने तुम्हारा विरोध किया। अब तुम कुछ नहीं कर पाओगे। अब लंका नगर पहुँच जाओ।
रावणा! तुम्हारी परम भक्ति से मुझे प्रसन्न करके तुम ने जिस आत्मलिंग को स्थापना की है। जिससे तुम्हारा चरित्र अमर बन गया। आज से यह गोकर्ण क्षेत्र भूकैलास के नाम से प्रसिद्ध होगा। यहाँ जो भी भक्त जन आयेंगे सब से पहले विघ्नेश्वर की पूजा करेंगे।
लोकास्समस्ता स्सुखिनो भवंतु।
2

तिरुमल तिरुपति देवस्थान, तिरुपति।

प्रश्नोत्तरी (क्विज) की नियमावली

1) प्रश्नोत्तरी की प्रतियोगिता केवल 15 वर्षों के अंदर बच्चों के लिए है।
2) भाग लेने वाले बच्चे हिंदु धर्म के होना अनिवार्य है।
3) इस प्रश्नोत्तरी में भाग लेने वाले बच्चों के अभिभावक अनिवार्य रूप से ति.ति.दे. के द्वारा प्रकाशित होने वाली 'सप्तगिरि' आध्यात्मिक मासिक पत्रिका का चंदादार होना आवश्यक है। प्रश्नोत्तरी के जवाबों के साथ अनिवार्य रूप से चंदादार की अपनी चंदा संख्या, नाम, पता, पिन-कोड के साथ फोन नंबर भी स्पष्ट रूप से लिख कर हमारे कार्यालय को भेजना चाहिए।
4) प्रश्नोत्तरी के जवाब, प्रश्नों के नीचे सूचित खाली जगहों पर लिख कर भेजना चाहिए।
5) प्रश्नोत्तरी के जवाब पत्र ओरिजनल या जिराक्स प्रति मान्य है।
6) जवाबों में कोई काट-छांट या सुधार नहीं होना चाहिए।
7) प्रश्नोत्तरी के जवाब पत्र **इस महीने का 25वाँ तारीख** के अंदर पहुँचाने की अंतिम तिथि है।
8) इस प्रश्नोत्तरी या क्विज में सही जवाब लिखने वाले बच्चों में से तीन बच्चों को मात्र ही 'लक्कीडिप पद्धति' में चुन कर विजेताओं की घोषणा की जाती है।
9) घोषित विजेताओं के नाम आगामी मास की 'सप्तगिरि' पत्रिका में प्रकाशित किए जाते हैं।
10) ति.ति.दे. के प्रधान संपादक कार्यालय में कार्यरत कर्मचारियों के बच्चे इस प्रश्नोत्तरी प्रतियोगिता के लिए अयोग्य हैं।
11) प्रश्नोत्तरी से संबंधित कोई भी समाचार फोन से नहीं दिया जाएगा। कृपया फोन से संपर्क न करें। ति.ति.दे. का निर्णय ही अंतिम है।
12) क्विज का समाधान भी इसी पुस्तक में है।

प्रश्नोत्तरी-जवाब कृपया इस पते पर भेजे :-
प्रधान संपादक, सप्तगिरि कार्यालय,
दूसरा मंजिल, ति.ति.दे. प्रेस, के.टी.रोड,
तिरुपति-517 507, तिरुपति जिला, आंध्र प्रदेश।

बच्चे का नाम...
लिंग/आयु..........., चंदा नंबर.......................
पता..
....
मोबाइल नं..

क्विज-37

1) श्री महाविष्णु का प्रिय पत्ता का नाम क्या है?
ज)..
2) राम वनवास के लिए किस के साथ चल गयी?
ज)..
3) विभीषण का भाई का नाम क्या है?
ज)..
4) श्री वादिराज तीर्थ का किस वर्ष में जन्म हुआ था?
ज)..
5) देवकी और वसुदेव के आठवें संतान के रूप में किस को जन्म दिया?
ज)..
6) बलराम का छोटा भाई का नाम क्या है?
ज)..
7) हिरण्याक्ष को किसने वध किया?
ज)..
8) वेदों की रक्षण के लिए विष्णु ने किस रूप को धारण किया?
ज)..
9) गणेशजी का पिताजी का नाम क्या है?
ज)..
10) भगवान श्रीकृष्ण का गुरु का नाम क्या है?
ज)..
11) रावण किस भगवान को प्रसन्न करने के लिए तपस्या किया था?
ज)..
12) बाल ब्रह्मचारी के रूप में रावण को किस भगवान ने दर्शन दिया?
ज)..
13) भूकैलास के नाम से प्रसिद्ध पुण्य क्षेत्र का नाम क्या है?
ज)..
14) 'नींबू' परिवार का नाम क्या है?
ज)..
15) 'नींबू' का वैज्ञानिक नाम क्या है?
ज)..

बालविकास

बिंदी को जोड़िए

रंगों को भरिये क्या!

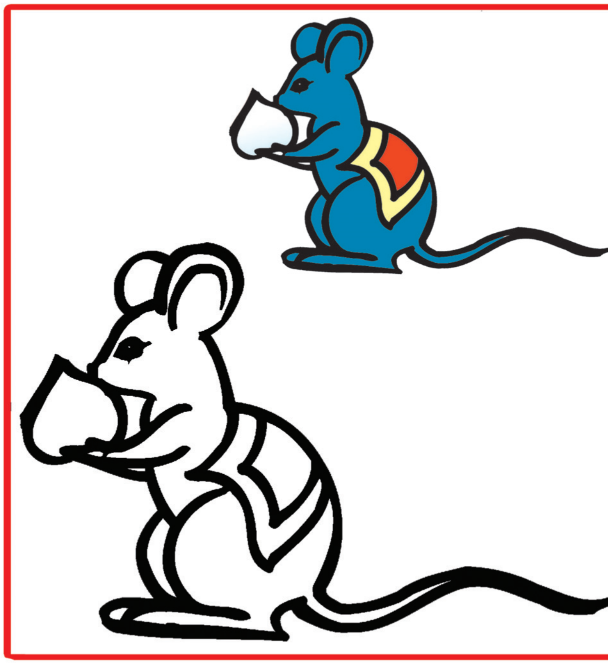

चित्रों को जोडिएँ

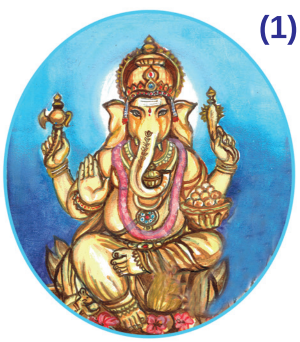
(1)

(2)

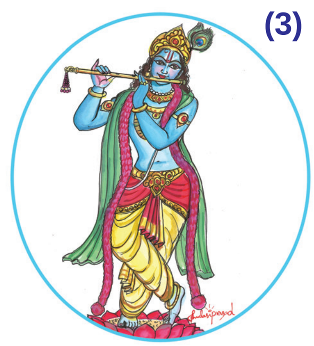
(3)

(a)

(b)

(c)

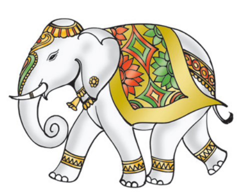
(d)

(e)

(f)

(g)

(h

(i)

जवाब : 1) c, h, i. 2) a, b, d. 3) e, f, g.

तिरुमल तिरुपति देवस्थान, तिरुपति।

सप्तगिरि

(आध्यात्मिक सचित्र मासिक पत्रिका)

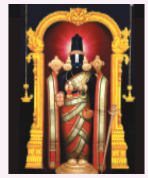

चंदा भरने का पत्र

1. नाम : ....
   (अलग-अलग अक्षरों में स्पष्ट लिखें) ....
   ....
   पिनकोड ....
   मोबाइल नं ....
2. वांछित भाषा : ☐ हिन्दी ☐ तमिल ☐ कन्नड ☐ तेलुगु ☐ अंग्रेजी ☐ संस्कृत
3. वार्षिक चंदा ☐ रु.240/-; जीवन चंदा (12 वर्ष ही मात्र) ☐ रु.2,400/-;
   विदेशियों के लिए वार्षिक चंदा ☐ रु.1,030/-
4. चंदा का पुनरुद्धरण :
   (अ) चंदा की संख्या :
   (आ) भाषा :
5. शुल्क का विवरण :
   मांगड्राफ्ट संख्या (D.D.) / भारतीय डाकघर (IPO) /
   ई.एम.ओ. (EMO) :
   दिनांक :

स्थान :

दिनांक : चंदा भरनेवाले का हस्ताक्षर

. . . .

⌖ वार्षिक चंदा : रु.240/-, जीवन चंदा (12 वर्ष ही मात्र) : रु.2,400/- 'प्रधान संपादक, ति.ति.दे., तिरुपति' के नाम से मांगड्राफ्ट लेकर निम्न सूचित पते पर भेज सकते हैं।

⌖ नवीन चंदादार या चंदा का पुनरुद्धार करनेवाले इस पत्र के कूपन को काटकर, एक कागज पर चंदादार को अपने पूरे विवरण के साथ सुस्पष्ट लिखकर निम्न पते पर भेजना चाहिए।

प्रधान संपादक, सप्तगिरि कार्यालय,
दूसरा मंजिल, ति.ति.दे.प्रेस, के.टी.रोड,
तिरुपति-517 507. तिरुपति जिला, (आं.प्र)

धोखा मत खाओ!

हमारी दृष्टि में आया है कि कुछ लोग 'सप्तगिरि' आध्यात्मिक सचित्र मासिक पत्रिका की सदस्यता के लिए यह कह कर राशि वसूल करने में मग्न हैं कि वे श्री बालाजी के दर्शन, प्रसाद आदि की व्यवस्था करेंगे। ऐसे लोगों पर विश्वास न करें। उनसे सावधान रहें।

श्री बालाजी के दर्शन और प्रसाद पाने के लिए 'सप्तगिरि' पत्रिका कार्यालय से कोई संपर्क न करें। क्यों कि उन से पत्रिका कार्यालय का कोई संबंध नहीं है। कृपया चंदादार अपना चंदा नकद को सीधा 'प्रधान संपादक, सप्तगिरि कार्यालय, ति.ति.दे., तिरुपति' पता को भेजना पडेगा।

ति.ति.देवस्थान ने सदस्यता राशि लेने के लिए किसी व्यक्ति को नियुक्त नहीं किया। अतिरिक्त राशि का भुगतान न करें। दलालों पर विश्वास मत करें।

STD Code: 0877

दूरभाष : 2264359,
2264543.

संपादक : 2264360

कॉल सेंटर नंबर :
2233333, 2277777.

मंत्र - ॐ नमो वेंकटेशाय

https://ttdevasthanams.ap.gov.in
इस वेबसैट से भी सप्तगिरि पत्रिका चंदा भर सकते है।

Printed by Sri R.V.Vijayakumar, B.A.,B.Ed., and Published by Dr.V.G. Chokkalingam, M.A., Ph.D. on behalf of Tirumala Tirupati Devasthanams and Printed and Published at Tirumala Tirupati Devasthanams Press, K.T.Road, Tirupati-517 507. Editor : Dr.V.G. Chokkalingam, M.A., Ph.D.

दि.30-06-2025 से दि.02-07-2025 तक श्रीनिवासमंगापुरम्, श्री कल्याण वेंकटेश्वरस्वामी का साक्षात्कार वैभवोत्सव अत्यंत वैभव से संपन्न किया। इस संदर्भ में भगवान जी महाशेषवाहन, हनुमंतवाहन और गरुड़वाहन के द्वारा भक्तों को अनुग्रह किया।

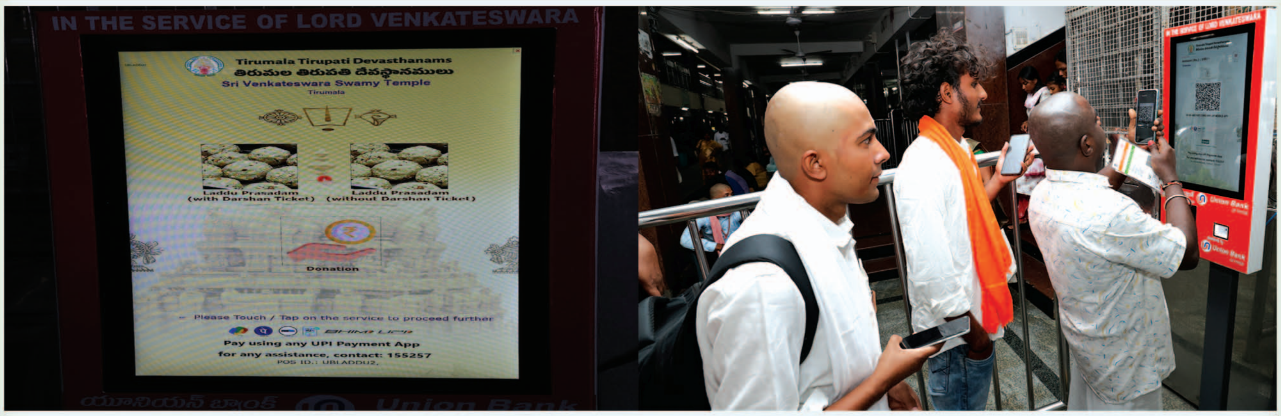

दि.23-06-2025 को तिरुमल में स्थित लड्डु बिक्री केंद्र में भक्तों को और एक सुविधा पूर्वक सेवा के दौरान लड्डु लेने का निरीक्षण का समय को कमी करने के लिए KIOSK (कियोस्को) मिशन से दर्शन का टिकट प्राप्त भक्त और बिना दर्शन टिकट वाले भक्तगण आधार नंबर के अनुसार 2 अतिरिक्त लड्डु प्राप्त करने का मौका मिलता है। यू.पी.आई. पेमेंट के माध्यम से रसीद भी प्राप्त कर सकते हैं।

दि.21-06-2025 को तिरुपति में स्थित ति.ति.दे. प्रशासनिक भवन के प्रांगण में हुए मैदान में अंतर्राष्ट्रीय योग दिवस कार्यक्रम को ति.ति.दे. ने आयोजित किया। इस संदर्भ में ति.ति.दे. न्यास-मंडली के सदस्य श्रीमती पनबाक लक्ष्मी, श्री जी.भानुप्रकाश रेड्डी, ति.ति.दे. का अतिरिक्त ई.ओ. श्री सी.एच.वेंकय्या चौदरी, आई.आर.एस., जे.ई.ओ. श्री वी.वीरब्रह्मम्, आई.ए.एस., सी.वी. अण्ड एस.ओ. श्री के.वी.मुरली कृष्ण, आई.पी.एस., ति.ति.दे. कर्मचारी और विद्यार्थिगण ने भाग लिया।

SAPTHAGIRI (HINDI) SPIRITUAL ILLUSTRATED MONTHLY Published by Tirumala Tirupati Devasthanams
Printing on 25-07-2025 & Posting at Tirupati RMS Regd. with the Registrar of Newspapers for India under
RNI No.10742/1957. Postal Regd.No.TRP/152/2024-2026 "LICENCED TO POST WITHOUT PREPAYMENT
No.PMGK/RNP/WPP-04(2)/2024-2026" Posting on 5th of every month.

श्री गणेश चतुर्थी (27-08-2025)